अभिनव कृषि

वर्ष-3 अंक-4 दिसम्बर-2021

विशेषांक

● एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन ● सिंचाई प्रबन्धन ● मृदा स्वास्थ प्रबन्धन ● मशरूम उत्पादन ● कृषि पर्यटन

प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

#IFFCONanoUrea
IFFCO
इफको नैनो यूरिया
तरल
पेश है किसानों के लिए दुनिया का
पहला नैनो यूरिया!
लागत कम करने
में सहायक
मिट्टी की गुणवत्ता
को बढ़ाए
पौधों के पोषण
में सहयोगी
किसानों की आय
में सुनिश्चित वृद्धि
फसल उपज
को बढ़ाए
पारंपरिक यूरिया
से सस्ता
NANO UREA
Liquid
FOLLOW US:
INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop
इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड
जयपुर तृतीय तल, नेहरू सहकार भवन, जयपुर, राजस्थान, राजस्थान 302001
दूरभाष : 0141-2740660, 2740307, 2740307

ललित पाटीदार
(M.Sc. Horticulture)
मो. 9413023482, 9887437524
अम्बिका
मॉर्डन एग्रीकल्चर
KRISHAJ
SUMITOMO CHEMICAL
Ranadey
DUPONT
BAYER
BASF
We create chemistry
नर्सरी टूल्स, मल्च, स्प्रे पम्प, खाद, बीज, कीटनाशक, वर्मी कम्पोस्ट, ऑर्गेनिक खाद एवं दवाई के लिए सम्पर्क करें।
चन्द्रभागा रोड़, झालरापाटन, जिला-झालावाड़ (राज.) 326023

Agriculture University Kota (Host, me)

Hon'ble Governor of Rajasthan

कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र

(Agriculture Technology Management and Quality Improvement Centre -ATMQIC)

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

स्थापना के उद्देश्य

- नवोन्मेषी कृषि प्रौद्योगिकी का प्रभावी हस्तानान्तरण
- किसान कॉल सेन्टर की स्थापना
- कृषि तकनीकी संग्रहालय की स्थापना
- कृषि संसाधन केन्द्रों की स्थापना
- कृषि आदान व उत्पाद बिक्री केन्द्र की स्थापना
- कृषक उपयोगी साहित्य प्रकाशन
- विश्वविद्यालय द्वारा विकसित विभिन्न तकनीकियों का संकलन एवं प्रदर्शन

स्वामी प्रकाशक : डॉ. एस.के. जैन, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य _____

स्वामी निदेशक प्रसार शिक्षा, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा प्रकाशक डॉ. एस.के. जैन, मुद्रक श्री जमील अहमद, मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा से मुद्रित एवं निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, बोरखेड़ा, कोटा, राज. से प्रकाशित, संपादक डॉ.एस.के. जैन

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–4 दिसम्बर–2021 पृष्ठ संख्या : 49

संरक्षक

प्रोफेसर डी.सी. जोशी
कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.सी.मीना
सह आचार्य (प्रसार शिक्षा)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ. राकेश कुमार बैरवा
सह आचार्य (शस्य विज्ञान)
संपादक

डॉ. डी.के. सिंह
आचार्य (उद्यान विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. महेन्द्र सिंह
आचार्य (पशुपालन)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

श्रीमती गुंजन सनाढ्य
विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ.प्रताप सिंह
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. आई.बी. मौर्य
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. एम.सी. जैन
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड.ई.

सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(iv)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 4,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,000/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक	: DEE, Agriculture University, Kota
बैंक	: ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या	: 687801700345
IFSC	: ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट–"अभिनव कृषि" में प्रकाशित आलेख में दी गई जानकारी स्वयं लेखकों की है। किसी भी प्रकार के विवाद के लिए प्रकाशक एवं सम्पादक मण्डल जिम्मेदार नहीं होगा। तथा इसमें प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है।

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–4 दिसम्बर–2021

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	फसलों में आवश्यक पोषक तत्वों के कार्य एवं कमी के लक्षण राजेद्र कुमार यादव, शंकर लाल यादव, हरफूल मीणा एवं राकेश कुमार बैरवा	1-7
2.	मुख्य शस्य फसलों में खरपतवार प्रबन्धन रणवीर कुमार यादव, एस.एल. मून्दडा एवं शंकर लाल यादव	8-10
3.	आलू फसल में कुशल जल प्रबंधन एंव पौध संरक्षण धूनी लाल यादव, उदिति धाकड़, राजेन्द्र यादव एंव प्रताप सिंह	11-13
4.	सर्दियों में करें बटन मशरूम का उत्पादन कल्पना यादव, सरिता एवं मालचन्द जाट	14-17
5.	मृदा स्वास्थ्य कार्ड आधुनिक खेती की आवश्यकता राजेंद्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, एस.एन. मीना एवं सुभाष असवाल	18-19
6.	रबी की फसलों की पाले से सुरक्षा कैसे करें वर्षा गुप्ता, खजान सिंह, राजेश कुमार एवं मंजू मीणा	20-21
7.	भारत में एग्रो–टूरिज्म की भूमिका राजेश कुमार, वर्षा गुप्ता, खजान सिंह एवं के. सी. मीना	22-23
8.	ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण मिटाने में उपयोगी : पोषण वाटिका सुनिता कुमारी, आर. एल. मीना, बी. एल. जाट एवं अक्षय चित्तौड़ा	24-25
9.	चिया की उन्नत उत्पादन तकनीक सुरेन्द्र कुमार, प्रियंका एवं सरिता	26-27
10.	मशरूम उत्पादन का प्रबंधन एवं विपणन लोकेश कुमार मीना, मीरा कुमारी एवं के. सी. मीना	28-31
11.	कृषि विपणन में सूचना संचार प्रौधोगिकी की बढती भूमिका सुनील कुमार, पूनम कश्यप, पीयूष पूनिया एवं अमृतलाल मीणा	32-35
12.	आलू में लगने वाले रोग एवं प्रबन्धन अंकित सिंह, रीशू सिंह एवं एन. आर. मीना	36
13.	पोषक तत्वों से भरपुर क्विनोआ की उन्नत खेती सुरेन्द्र कुमार, प्रियंका एवं सरिता	37
14.	मैथी उत्पादन की उन्नत तकनीक मंजू मीणा, किरन मीणा, आर. के. मीणा एवं एम. सी. जैन	38-40
15.	काला नमक चावल : गौतम बुद्ध से ऐतिहासिक जुड़ाव नितिका कुमारी, सी. बी. मीणा एवं रवित साहू	41
16.	स्ट्रॉबेरी का औषधीय गुण और स्वास्थ्य लाभ गुंजन सनाढ्य, रूपसिंह और राकेश कुमार बैरवा	42-43
17.	मृदा लवणीकरण को रोकना एवं मृदा उत्पादकता बढ़ाना–भविष्य की चुनौतियाँ और उनका समाधान मनोज कुमार शर्मा	44
18.	जैविक खेती: किसानों के लिए वरदान लक्षिता चौहान, मनमीत कौर एवं रेनू जेठी	45-46
19.	संतरा की फसल ऐसे रहेगी वर्ष भर स्वच्छ व स्वस्थ राकेश कुमार यादव, एम. सी. जैन, राजेन्द्र कुमार यादव एंव विनोद कुमार यादव	47-49

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

कृषि रसायनों का हरित क्रांन्ति में अतुलनीय योगदान सर्वज्ञात है लेकिन इसके पश्चात् बढ़ती हुई जनसंख्या तथा सीमित भूमि के साथ अधिक उत्पादन करने के दबाव में वर्तमान कृषि में रासायनिक खादों एवं जीवनाशियों का अधिक व अविवेकपूर्ण उपयोग करने से हमारी मृदा, जल एवं वायु प्रदूषित हो रही है। इस विषाक्त रसायनों के लगातार प्रयोग से कीटपीड़क, रोगजनक, सूक्ष्मजीवियों एवं खरपतवार में प्रतिरोधी क्षमता विकसित हो रही है तथा साथ ही मित्रकीट एवं लाभदायक सूक्ष्मजीव की संख्या निरन्तर घट रही है। कृषि रसायनों के अंश मृदा, जल एवं फसल उत्पाद में रह जाते है जिसका दुष्प्रभाव मानव जाति, पशु–पक्षी एवं जलीय जंतुओं पर पड़ता है।

अतः हमें कृषि उत्पादन के लिए नियंत्रित एवं विवेकपूर्ण कृषि रसायनों का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही आजादी के अमृत महोत्सव में इस धरा को रासायनिक खादों और कीटनाशी से मुक्त करने की जरूरत है अतः कम लागत तथा ज्यादा मुनाफे वाली प्राकृतिक खेती की ओर जाने की आवश्यकता है। कृषि से जुड़े हमारे इस प्राचीन ज्ञान को आधुनिक समय के हिसाब से तराशने की भी जरूरत है।

प्रस्तुत अंक में विभिन्न कृषि विशेषज्ञों एवं शौधकर्ताओं द्वारा लिखित आलेखों को सम्मिलित किया गया है। जिनके माध्यम से एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, खरपतवार प्रबंधन, सिंचाई प्रबंधन, पाले से फसल बचाव, मशरूम उत्पादन प्रबंधन एवं विपणन, मृदा स्वास्थ्य कार्ड, मैथी, चिया एवं किनोवा की उन्नत खेती, कृषि पर्यटन, पोषण वाटिका, जैविक खेती एवं स्ट्राबेरी से स्वास्थ्य लाभ पर जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

मैं, पत्रिका के सभी लेखकों, सम्पादक मण्डल, एवं सलाहकार मण्डल के सदस्यों को इस अंक के प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई तथा सभी किसान भाईयों को इस रबी मौसम की फसल से अच्छी आय प्राप्त करने हेतु शुभकामनाऐं देता हूँ।

(एस.के. जैन)

फसलों में आवश्यक पोषक तत्वों के कार्य एवं कमी के लक्षण

राजेद्र कुमार यादव, शंकर लाल यादव, हरफूल मीणा एवं राकेश कुमार बैरवा
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

पौधों की वृद्धि एवं फसल उत्पादन में पोषक तत्वों का अहम योगदान है जिनकी, पौधों की वृद्धि, प्रजनन तथा विभिन्न जैविक कियाओ के लिए आवश्यक होती है। इन पोषक तत्वों के उपलब्ध न होने पर पौधों की वृद्धि रुक जाती है। यदि ये पोषक तत्व एक निश्चित समय तक न मिलें तो पौधों की मृत्यु भी हो जाती है। इसलिए पौधें अपनी वृद्धि के लिए मृदा, जल तथा वायु से कई तत्वों का शोषण करते है। लेकिन सभी तत्व पौधों के पोषण में भाग नही लेते है जो तत्व पौधों के पोषण में भाग लेते है उन्है पोषक तत्व कहते है। इन पोषक तत्वों की अनुपस्थिति में पौधें अपना जीवन चक्र को सफलतापूर्वक पूर्ण नही कर सकते, इसिलिए इन्है आवश्यक पोषक तत्व कहते है।

पौधों द्वारा मुख्य पोषक तत्वों के साथ–साथ गौण एवं शुक्ष्म पोषक तत्व को भी ग्रहण करते है जिसके कारणवश मृदा में इन तत्वों की उपलब्धता में भी प्रायः कमी आ जाती है। मृदा में इन आवश्यक पोषक तत्वों की अत्यधिक कमी के कारण पौधों में इसकी कमी के लक्षण दिखाई देने लगते है जिनकी आपूर्ति उर्वरकों, कार्बनिक खादों तथा जैव खादों के प्रयोग के अनुसार उपलब्ध पोषक तत्वों की भिन्न–भिन्न मात्रा होती है जिसका निर्धारण मृदा परिक्षण द्वारा किया जाता है। मृदा परिक्षण संतुलित, आर्थिक दृष्टि से उपयोगी तथा पौधों का आवश्यकताओं के अनुरुप उर्वरकों एवं खादों की मात्रा एवं अनुपात के निर्धारण के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

पादप पोषक तत्वों की अनिवार्यता: वैज्ञानिक आरनोन के अनुसार आवश्यक पोषक तत्व वह है–

1. जिनकी कमी के कारण पौधे अपना जीवन चक्र पूरा न कर सके।
2. किसी विशेष आवश्यक तत्व की कमी को केवल उसी तत्व को मृदा में मिलाकर या पर्णीय छिड़काव के द्वारा ही दूर किया जा सकता है
3. पौधों के पोषण में सीधे संनिहित होता है।

आवश्यक पोषक तत्व: पौधों की आवश्यकतानुसार पोषक तत्वों को निम्न लिखित वर्गो में रखा गया है।

- **मुख्य पोषक तत्व:** नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश–इनकी पौधों को पर्याप्त आवश्यकता होती है।
- **गौण पोषक तत्व:** कैल्सियम, मैग्निशियम एवं सल्फर– ये भी पौधों को पर्याप्त मात्रा मे चाहिए, लेकिन इनका कार्य मुख्य पोषक तत्वों से कम होता है।
- **सूक्ष्म पोषक तत्व:** लोहा, जिंक, कॉपर मैग्नीज, बोरोन एवं मालिब्डेनम इत्यादि– पौधों को इन पोषक तत्वों की केवल सूक्ष्म मात्रा में आवश्यकता होती है।

आवश्यक पोषक तत्वों के पौधों में कार्य एवं कमी के कमी के लक्षण

नाइट्रोजन (Nitrogen)

कार्य

1. यह अमीनों अम्ल, प्रोटीन, न्यूक्लिक अम्ल, पोफियरिन्स, फ्लेविन्स, प्यूरिन्स एवं पायरिमिडिन न्यूक्यिोटाइडस इंजाइम, कोइंजाइम, क्लोरोफिल, एलक्लायड्स इत्यादि का मुख्य संघटक होता है।
2. यह पौधों के वानस्पतिक विकास में सहायक होता है तथा पत्तिदार सब्जियों एवं चारे के गुणवत्ता में वृद्धि करता है।
3. यह पौधों में कार्बोहाइड्रेड की मात्रा में वृद्धि करता है।
4. यह फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्सियम तथा अन्य दूसरे तत्वों के उपापचयन में सहायक होता है।

कमी के लक्षण: जब पौधों में नत्रजन की सान्द्रता 1 प्रतिशत से कम होती है तो पौधों के विभिन्न भगों पर इसकी कमी के लक्षण दिखाई देते है जो निम्नलिखित है।

1. नत्रजन पौधों में गतिशील होता है। अतः इसकी कमी के लक्षण सर्वप्रथम नीचे की पत्तियों पर दिखाई देतें है। पत्तियों में क्लोरोफिल के स्थान पर केरोटीन एवं जेन्थोंफिल का सश्लेषण होने लगता है जिसके कारण इसका रंग हरा होने के बजाय पीला होने लगता है।
2. पौधों की कोशिकाओं की वृद्धि एवं विकास रुक जाता है जिससे पौधे बोने रह जाते है।
3. गन्ना, गेहूँ, जौ इत्यादि फसलों की वृद्धि कल्ले आने के तुरन्त बाद रुक जाती है।
4. पौधों में फूल आने के समय नत्रजन की कमी होने के कारण फूलों की संख्या में गिरावट आती है जिससे दानों की उपज में कमी आती है तथा दानों में प्रोटीन की गुणवत्ता भी निम्न कोटी की होती है।

फास्फोरस (Phosphorus)

कार्य

1. यह न्यूक्लिक अम्ल (डिऑक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल एवं राइबोन्यूक्लिक अम्ल), फास्फोप्रोटीन, फास्फोलिपिड्स सुगर फास्फेट, इंजाइम तथा ऊर्जा का मुख्य स्त्रोत एडिनोसीन ट्राईफास्फेट (ए.टी.पी.) तथा एडिनोसीन डाईफास्फेट (ए.डी.पी.) का मुख्य संघटक होता है। यह उच्च ऊर्जा बंध (high energy bond) के करण प्रकाश संश्लेषण एवं स्वसन किया में सहायता करता है।
2. फास्फोरस जड़ों में विकास में सहायक होता है। यह पौधों में फूल आने तथा बीज बनने की प्रकिया में सहायता करता है।

3. यह नत्रजन स्थिर करने वाले पौधों के जड़ों पर बनने वाले गाठों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है जिसके करण राइजोबियम की क्रियाशीलता बढ़ जाती है।
4. इससे खाद्यान्न फसलों के तने मजबूत एवं मोटे हो जाते है जिसके कारण हवा के प्रभाव से जल्दी गिरते नहीं है।

कमी के लक्षण

1. यह पौधों में गतिशील होता है। अतः इसकी कमी का लक्षण सर्वप्रथम नीचे की पत्तियों पर दिखाई देतें है।
2. इसकी कमी से पत्तियों में शर्करा का संचयन बढ़ जाता है जिसके परिणामस्वरुप ऐन्थोसाइनिन (बैंगनी रंग का वर्णक) का संश्लेशण होने लगता है। अतः पत्तियों का रंग हरा होने के बजाय बैंगनी रंग का हो जाता है।
3. इसकी कमी से जड़ एवं ने का विकास रुक जाता है जिसके कारण पौधें पतले एवं दुबले हो जाते हैं।
4. इसकी कमी की दशा में पत्तियाँ परिपक्व होने से पहले ही गिरने लगती है तथा फूल एवं फल विलम्ब से आते है।
5. इसकी कमी से पौधों की स्वशन किया में वृद्धि होती है तथा स्वस्थ फल एवं बीज नही बन पाते है।

पोटैशियम (Potassium)

कार्य

1. यह पौधों में चीनी एवं माँड (स्टार्च) बनाने की क्रिया में सहायक होता है। यह पौधों में प्रतिकूल मौसम एवं कीट–व्याधियों से रक्षा करने की क्षमता बढ़ाता है। इससे पौधों के तने मजबूत एवं चमकदार तथा दाने ह्रस्ट–पुस्ट बनते है। यह पौधों में कार्बोहाइड्रेड के स्थानांतरण में सहायक होता है।
2. यह जड़ो के विकास में सहायक होता है तथा सूखे के प्रति पौधों में सहनशीलता को बढ़ाता है।
3. यह फसलों में गुणवत्ता में सुधार करता है तथा फलों एवं सब्जियों में इसकी अधिकता से इनके भडारण क्षमता में वृद्धि होती है
4. यह पौधें के पत्तियों पर स्थिर पर्ण छिद्रों (stomata) के खुलने एवं बन्द होने की प्रकिया को भी नियत्रित करता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी के लक्षण नीचे की पुरानी पत्तियों पर दिखाई देतें है। अधिकतर पौधों में पुरानी पत्तियों के अग्र भाग तथा किनारे पीले पड़कर (क्लोरोसिस) मर जाते है (नेकारोसिस)। अतः पत्तियों के किनारे देखने में जले हुए प्रतीत होते है तथा अपरिपक्व अवस्था में ही पत्तियाँ मरने लगती है।
2. इसकी कमी से पौधें का विकास धीमा हो जाता है।
3. तने कमजोर तथा कीट व्याधियों के प्रति संवेदनशील हो जाते है तथा हल्की हवा चलने पर भी भूमि पर गिर जाते है।
4. दाने, फल एवं सब्जियों के गुणवत्ता में कमी आती है। दाने झुर्रीदार, छोटे तथा बीमारीयों के प्रति संवेदनशील होते है। फलों में शर्करा की कमी हो जाती है जिसके कारण दाने के सामान्य रंग में परिर्वतन होने लगता है। साथ ही फलों एवं सब्जियों के भण्डारण क्षमता में भी कमी आती है।

कैल्शियम (Calcium)

कार्य

1. यह पौधों के कोशिका–भित्ति (Cell wall) के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह कैल्शियम पेक्टेट के रुप में कोशिकाओं के मध्य पटलिका (middle lemella) का निर्माण करता है। मध्य पटलिका पौधों के लिए हानिकारक तत्वों को छोड़कर सभी पोषक तत्वों को कोशिका में प्रवेश करने में सहायक होता है।
2. यह पौधें कर जड़ों के अग्र भाग में स्थित विभाज्योतकों की क्रियाशीलता तथा नये उत्तकों के निर्माण में आवश्यक तत्व होता है।
3. पौधों में उपापचयी क्रियाओं से उत्पन्न हुई कार्बनिक अम्लों जैसे साइट्रिक अम्ल, मैलिक अम्ल, ऑक्जेलिक अम्ल इत्यादि को उदासीन करता है। इसके साथ ही यह फास्फोरिक अम्ल को उदासीन करने में भी सहायक होता है।
4. यह दलहनी फसलों की जड़ों पर गाँठों के निर्माण में सहायक होता है।
5. यह मृदा का पी.एच. बढ़ाकर नत्रजन, आयरन, बोरोन, जिंक, कॉपर तथा मैगनीज की उपलब्धता को बढ़ाता है।

कमी के लक्षण

1. पौधों में अगतिशील होने के कारण इसकी कमी होने पर सर्वप्रथम अग्रस्त कलिकाये (top buds) प्रभावित होती है, जिसके कारण इनका विकास रुक जाता है।
2. इसकी कमी से पत्तियों के किनारे तथा अग्र शिरा सुखने लगती हैं। साथ ही पत्तियों के किनारों की समान रुप से वृद्धि नही होती है।
3. दलहनी फसलों में कैल्शियम की कमी के कारण उनकी जड़ों पर कम संख्या में छोटी–छोटी गाँठें बनती है।

मैग्नीशियम (Magnesium)

कार्य

1. यह क्लोरोफिल में मैग्नीशियम पोरफाइरिन के रुप में होता है। यह उर्जा एवं कार्बोहाइड्रेड उपापचयन से संबंधित इंजाइम की क्रियाशीलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
2. यह फास्फोरस के अवशोषण एवं शर्करा के स्थानान्तरण को प्रोत्साहित करता है। यह पौधों में स्टार्च तथा शर्करा के स्थानान्तरण में सहायक होता है।
3. यह बीजों के निर्माण में सहायक होता है।

4. यह पौधों मे तेल एवं वसा के संश्लेषण में सहायक होता है तथा सल्फर के साथ जुड़कर बहुत से फसलों में तेल की मात्रा बढ़ाने का कार्य करता है।

कमी के लक्षण

1. मैग्नीशियम के कमी के लक्षण सर्वप्रथम पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते है। इसकी कमी से पत्तियाँ सूख जाती है, परन्तु नसों (veins) का रंग हरा बना रहता है।
2. अनाज वाली फसलों के विकास रुकने के कारण ये बौने रह जाते है।
3. इसकी कमी से नींबूवर्गीय पौधों की पत्तियाँ कांसे के रंग की (bronzing disease) हो जाती है।
4. इसकी कमी से पौधों की पत्तियाँ बिना सूखे ही गिरने लगती है। इस प्रकार पौंधों की वृद्धि एवं उत्पादन में कमी आने लगती है।
5. मक्के की पत्तियों पर धारियाँ दिखाई देती हैं तथा पत्तियों के किनारे एवं अग्र भाग पर लाल रंग उत्पन्न होता है तथा बाद में पत्तियाँ नीचे की तरफ अन्दर की ओर सिकुड़ने लगती है।
6. मैग्नीशियम की कमी वाले चारागाह में चरने वाले पशुओं में 'ग्रास टिटेनी' (grass titany) नामक बीमारी होती है।

सल्फर (Sulphur)

कार्य

1. यह वसा एवं पर्णहरित के संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
2. यह सल्फरयुक्त एमीनो अम्लों जैसे सिस्टीन(C6H12N2O4S2), सिस्टाईन (C3H7NOS), मेथियोनिन (C5H11NO2S) तथा प्रोटीन संश्लेषण में आवश्यक होता है।
3. यह जड़ों के उचित विकास, इंजाइम की सकियता, विटामिन्स आदि के लिए आवश्यक होता है।
4. सल्फर के कारण तिलहनी फसलों मे तेल, दालों में प्रोटीन, प्याज में एलाइल प्रोपाइल डाइसल्फाइड (C3H3S2C3H7) पदार्थ के कारण तीखापन, लहसुन में एलिसिन (C6H10OS2) जिसके कारण एन्टीबैक्टीरियल क्रिया होती है, के संश्लेषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

कमी के लक्षण

1. सल्फर की कमी का लक्षण सर्वप्रथम नई पत्तियों पर दिखाई देते है। प्रायः नई पत्तियाँ आकार में छोटी रह जाती हैं तथा उनका रंग हल्का हरा होकर पीला पड़ जाता है।
2. तने पतले एवं कमजोर रह जाते हैं तथा पौधों की बढ़वार रुक जाती है। खाद्यान्न फसलों (cereals) में परिपक्वता देर से आती है। जड़ों की वृद्धि कम होती है तथा दलहनी फसलों की जड़ों पर गाँठें कम बनती है।

आयरन (Iron)

कार्य

1. यह साइट्रोक्रोम में पाये जाने वाले हेम–आयरन–प्रोफायरिन जटिल अवयव के प्रोस्थेटिक समुह का अंग होता है। साइट्रोक्रोम हरितलवक के अपचयोपचय प्रणाली (redox system) माइट्रोकान्ड्रिया तथा नाइट्रेट रिडक्टेज इंजाइम में पाये जाने वाले अपचयोपचय श्रृखला (redox chain) का महत्वपूर्ण अवयव होता है।
2. यह प्रकाश संश्लेषण क्रिया में होने वाले ऑक्सीकरण–अवकरण अभिकियाओं में सहायक होता है।
3. यह नाइट्रोजिनेज इंजाइम, लेग्हेमोग्लोबिन, फेरिक्रोम इत्यादि का मुख्य अवयव होता है।
4. यह पर्णहरित (chloroplast) तथा हेम संश्लेषण का पूर्ववर्ति (precursor) होता है तथा एमीनोलेवोलेनिक ऐसिड के दर को नियंत्रित करने में सहायक होता है।

कमी के लक्षण

1. आयरन की कमी से नई पत्तियों में नसों के बीच का भाग पीला (interveinal chlorosis) हो जाता है। तथा नसे हरी रहती है। इसकी कमी से पत्तियों का रंग पीला या सफेद हो जाता है।
2. आयरन की कमी से नई पत्तियों में स्टार्च एवं शर्करा की सान्द्रता कम हो जाती है।
3. इसकी कमी से धान में 'अन्तशिरा हरितमा रोग' (interveinal yellowing and chlorosis) तथा 'आईवरी वाईट रोग' (ivory white disease) होता है।

मैगनीज (Manganse)

कार्य

1. मैगनीज लगभग 3 5 विभिन्न इंजाइमों में को–फैक्टर (co-factor) की तरह कार्य करता है। इसमें से अधिकांश इंजाइम ऑक्सीकरण–अवकरण, डीकाब्रोक्सिलेशन तथा हाइड्रोलायटिक अभिकियाओं को उत्प्रेरित करते है। यह लिग्नन सं लेषण में भाग लेने वाले एमिनो अम्लो एवं फिनॉल के संश्लेषण से संबंधित इंजाइमों को उत्प्रेरित करता है।
2. यह खराब वायूसंचाार के दूष्प्रभाव को रोकने में सहायक होते है। यह क्लोरोफिल निर्माण में सहायक होते है। यह कार्बोहाइड्रेड एवं प्रोटीन के उपापचयन में सहायक होते है। यह प्रकाश संश्लेषण किया, इंजाइम की कियाशीलता जड़ों के विकास के लिए आवश्यक होता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी का लक्षण सर्वप्रथम नई पत्तियों पर दिखाई देते है। पत्तियाँ पीली पड़ जाती है। अत्यधिक कमी होने पर पेड़ो पत्तियाँ का

हल्का हरा रंग सफेद हो जाता है। पुरानी पत्तियों के ऊपर मृत धब्बे (daed spots) दिखाई देते है।

2. इसकी कमी से पौधों की वृद्धि रुक जाती है।
3. मैगनीज की कमी का प्रभाव जई पर सबसे अधिक दिखाई देते है। जब पौधे 6 से 9 सेमी. के होते है, उसी समय निचली पत्तियों नीले–भूरे रंग के धब्बे या धारियाँ दिखाई देते है जो आपस में मिलकर बादामी रंग की हो जाती है, इस जई की बीमारी ग्रे स्पीक (grey speck) के नाम से जानते है। जड़ों का विकास भी ठीक प्रकार से नही होता है और पौधे सूखने लगते है।
4. इसकी कमी से फूलों में परागकण की उर्वरता में कमी आती है जिससे दाने कम बनते है तथा उपज में कमी आती है।
5. मैगनीज की कमी से फसलों पर भिन्न–भिन्न प्रकार की बिमारियाँ उत्पन्न होती है जिसे निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 1: मैग्नीज की कमी से फसलों में होने वाली बीमारियाँ

फसल	बीमारियाँ
मटर	बीजों में मार्श धब्बे (marsh spot)
खाद्यान्न फसलें	जई में धूसर रोग (grey speck), सफेद धारी (white strips), धब्बेदार पत्तियाँ (leaf spot), सूखे धब्बे (dry spot)
चुकन्दर	चित्तीदार पीला (specklet yellow)
गन्ना	पहला अंगमारी रोग (pahala blight), धारीदार बीमारी (strip disease)
सेत एवं पालक	पीला रोग (yelloy disease)

कॉपर (Copper)

कार्य

1. पौधों में अधिकतर कॉपर इंजाइमों के साथ बंधा रहता है जो रिडाक्स रिएक्सन (redox reaction) को उत्प्रेरित करने का कार्य करता है। यह पौधों में लगभग 100 से अधिक प्रोटीन के साथ जुड़ा होता है।
2. पौधों में पाये जाने वाले लगभग 50 प्रतिशत कॉपर हरितलवक में पाया जाता है जो प्लास्टोसायनिन के साथ बंधा रहता है तथा प्रकाश संश्लेषण किया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
3. यह सुक्ष्म जीवों द्वारा नत्रजन स्थिरीकरण में भी सहायक होता है। यह क्लोरोफिल को नष्ट होने से बचाता है।
4. यह पौधों में इंडोल एस्टिक अम्ल के संश्लेशण में सहायक होता है। यह आयरन के उपयोग में मदद करता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी से नई पत्तियों पीली पड़ जाती है। दलहनी फसलों में कॉपर के अभाव में जड़ों पर बनने वाली गाँठों की संख्या कम होती है जिससे नत्रजन स्थिर करने की दर में कमी आती है।
2. इसकी कमी से पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया धीमी हो जाती है जिससे कार्बोहाड्रेड संश्लेषण में गिरावट आती है। इसकी कमी से जुझ रहे गेहूँ के पौधों में वानस्पतिक की सान्द्रता कम हो जाती है।
3. इसकी कमी से पौधों में कोशिका–भित्तियों में लिग्निन की मात्रा कम हो जाती है जिसके कारण पत्तियाँ व ठहनियाँ टेढ़ी–मेढ़ी हो जाती है।
4. इसकी कमी से वानस्पतिक विकास के तुलना में दानें, बीज एवं फल बनने की प्रकिया अधिक प्रभावित होती है। इसकी कमी से पौधें बौने रह जाते है जिससे उपज घट जाती है।
5. नीबूवर्गिय पेड़ों की बड़ी पत्तियाँ प्रायः कुरुप हो जाती है उनका रंग हल्का पड़ जाता हैं तथा फलों के छिलके पर गोद जैसा चिपचिपा पदार्थ जमा हो जाता है।
6. इसकी कमी से पौधों में निन्मलिखित रोग उत्पन्न होता है।
   - नीबू का डाई बेक रोग (Dieback of citrus)
   - नीबू का लघुपर्तक रोग (Little leaf of citrus)
   - गेहूँ में व्हाइट टीप/रिक्लेमिनेशन रोग (White tip wheat/reclamation disease)
   - पेड़ों में समर डाइ बेक रोग (Sumer dieback disease of trees)
   - स्टेम मेलानोसिस (Stem melonesis)
   - टेक ऑल रुट रॉट (Take all root rot)
   - अर्ग ऑफ इन्फेक्सन (Erg of infection)

जिंक (Zinc)

कार्य

1. यह अल्कोहल डिहाड्रोजिनेज, फास्फोलाइपेज, कार्बोक्सिलपेप्टाइडेज, एल्कलाइन फास्फेटेज, कॉपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज, कार्बोनिक एन्हाइड्रेज, पेप्टाइडेज इत्यादि इंजाइमों का महत्वपूर्ण अंग है।
2. यह प्रोटीन, केरोटीन तथा सिस्टीन के संश्लेषण में आवश्यक होता है। यह कार्बोहाइड्रेडस के उपापचयन तथा ऑक्सिन हार्मोन की सकियता में आवश्यक होता हैं।
3. यह जल अवशोषण के साथ–साथ क्लोरोफिल निर्माण में सहायक होता है। यह पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले पदार्थो के निर्माण में सहायक होता है।
4. जिंक के उपयोग से कपास की फसल में फ्यूजेरियम, टमाटर में फाइटोपथोरा, तम्बकू में मोजेक विषाणु के नियंत्रण में सहायता मिलती है।

कमी के लक्षण

1. जब पौधें में जिंक की सान्द्रता 15–20 मिलीग्रीम जिंक/किलोग्राम शुष्क भार से कम होती हैं तो इसकी कमी के लक्षण पौधों पर दिखाई देते है।
2. इसकी कमी से सोयाबीन की पुरानी पत्तियों का रंग लाल–हरा हो

जाता है। आलु के पौधों में जिंक की कमी से धूसर भूरे रंग के या काँसे के रंग के अनियमित धब्बे पड़ जाते है।ये धब्बे प्राय: पत्तियों के बीच में होते है।

3. गेहूँ में सर्वप्रथम ऊसर की तीसरी पत्ती के आधार पर भूरे या कथई रंग के धब्बे बनने लगते है जो कुछ ही दिनों में पूरी पत्ती पर फैल जाते है तथा ऊतको का हरा रंग समाप्त हो जाता है एवं ऊतक मर जाते है जिसके कारण पत्तियाँ अपने मध्य भाग से सिकुडकर अग्र भाग की ओर से झुकने लगती हैं और अंत में नीचे की ओर झुक जाती है।
4. मक्के में नई पत्तियों के आधार पर ऊतक मध्यशिरा के दोंनो ओर सफेद पीले रंग में परिवर्तित हो जाते है। धीरे–धीरे पत्ति के अग्र भाग की ओर बढ़ते है। जिंक की अधिक कमी की स्थिति में पूरी पत्ती सफेद–पील रंग की हो जाती है तथा तने के दो गाँठों के बीच की दूरी कम हो जाने के कारण पौधें छोटे दिखने लगते है। बाद में पत्तियों का सफेद भाग सूखने लगता है। रबी मक्के में ये लक्षण ज्यादा दिखाई देते है।इसे सफेद कली रोग भी कहा जाता है।
5. इसकी कमी से धान में खैरा रोग (khaira disease) होता है। इस रोग में सर्वप्रथम तीसरी पत्ती के आधार पर लाल भूरे रंग के छोटे धब्बे प्रकट होते है जो कुछ समय बाद एक दूसरे से मिलकर भूरे रंग के बड़े धब्बे का रुप ले लेते है। धीरे–धीरे ये लक्षण ऊपर की पत्तियों में प्रकट होने लगते है और पत्तियाँ अलग होकर गिरने लगती है। पौधों की वृद्धि रुक जाती हैं। खेत में अधिक समय तक पानी लगे रहने से यह रोग तीव्र गति से बढ़ता है।
6. इसकी कमी से नीबू की पत्तियों में शिराओं का भाग पीला पड़ जाता है, जिसे धब्बेदार पत्ती राग कहते है।
7. मिर्च में इसकी कमी से पत्तियाँ पतली एवं छोटी हो जाती है मथा गुच्छों में दिखाई देती है

बोरॉन (Boron)

कार्य

1. यह कार्बोहाइड्रेट्स एवं आक्सिन के स्थानांतरण, प्रकाश संश्लेशण, प्रोटीन तथा पानी के उपापचयन, कोशिका विभाजन एवं कार्टेक्स का विकास, कोशिका भित्ति मे पेक्टिन का निर्माण इत्यादि के लिए आवश्यक होता है।
2. यह पौधों द्वारा नाइट्रोजन के अवशोषण में सहायक होता है। यह पोटैशियम : कैल्सियम के अनुपात को नियंत्रित करता हैं
3. यह परागण तथा प्रजनन किया में सहायक होता है। यह पानी के अवशोषण को भी नियंत्रित करता हैं
4. फसलों मे बोरोन की पर्याप्त उपलब्धता से जड़ो में बनने वाले गाँठदार रोग की सम्भावना कम हो जाती है।
5. बोरोन पौधों में परागनली की वृद्धि के लिए आवश्यक होता है जिससे फूल व बीज बनने में सहायता मिलती है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी से दलहनी फसलों की जड़ो पर बबने वाली गाँठों का निर्माण रुक जाता है।
2. नई पत्तियाँ गुच्छे का रुप लेकर फुल जाती है। अधिकांश पौधों में शीर्षस्थ कलिकाएँ मर जाती है।
3. बोरोन की कमी से पत्तियों में मोटापन, कड़ापन, मुड़ा होना, झुरियाँ पड़ना, सूख जाना, हरिमाहीनता का होना इत्यादि लक्षण दिखाई पड़ सकते है।
4. फूलगोगी में फूल बदरंग होकर गेरुई भूरा हो जाता है तथा पत्तियों के किनारे पीले एवं लाल हो सकते है। जड़ो में पत्तियों तक जल एवं पोषक तत्वों को ले जाने वाले उत्तकों की प्रणाली खराब हो जाती है।
5. इसकी कमी से फूलों का बनना कम हो जाता है। फूलों में परागकणों की संख्या भी कम होती है तथा उसमें निशेचन करने की क्षमता कम होती है। परिणामस्वरुप पौधों पर फल कम संख्या में लगते है तथा परिपक्व होने से पहले ही गिर जाते है।
6. बोरोन की कमी जड़ो का विकास रुक जाता है जिससे छोटी तथा झाड़ीनुमा दिखाई देती है। बोरोन की कमी से फलों का फटना एक आम समस्या है।

मॉलिब्डेनम (Molybdanum)

कार्य

1. यह प्रोटीन एवं अमीनो अम्ल के संश्लेषण को प्रभावित करजा है।
2. यह सहजीवी एवं असहजीवी नत्रजन स्थिरिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। तथा दलहनी फसलों का उपज बढ़ाने में सहायक होता है।
3. मॉलिब्डेनम की कमी खासकर अम्लीय मृदाओं में उगायी गई दलहनी फसलों, फूलगोबी एवं मक्के में देखने को मिलती है। इन मृदाओं में अभिकियाशील आयरन ऑक्सीहाइड्रेट की सान्द्रता अधिक होती है जो अधिक मात्रा में MoO_4 आयन अधिशोषित कर लेती है। दस प्रकार मृदा पी.एच. मान कम होने के साथ–साथ मॉलिब्डेनम का अवशोषण बढ़ता जाता है।
4. यह नाइट्रोजन स्थिरीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले नाइट्रेट रिडक्टेज इंजाइम का महत्वपूर्ण अंग होता है जो इलेक्ट्रोन वाहक का कार्य करता है। साथ यह अन्य तीन इंजाइम जेंथिन डीहाइड्रोजिनेज, एल्डीहाइड ऑक्सीडेज तथा सल्फाइट ऑक्सीडेज के संश्लेषण में सहसयक होता है।
5. यह शर्करा एचं विटमीन–सी के संश्लेषण में सहायक होता है। यह एस्कार्बिक एसिड तथा इंजाइम कियाशीलता को प्रभावित करता है। यह फास्फोरस उपापचयन को प्रभावित करता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी के लक्षण नत्रजन के कमी के लक्षण से मिलते–जुलते है। इसकी कमी से तना पीले रंग का हो जाता है पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्तियाँ झुलसकर मुड़ जाती है।

2. इसकी अधिक कमी होने से पत्तियाँ कागज जैसी होकर कटोरी के आकार में परिवर्तित हो जाती है। इसकी कमी से पुष्पन क्रिया भी बाधित होती है जिससे फलों का बनना अवरुद्व हो जाता हैं।
3. इसकी कमी से होने वाली बीमारीयाँ निम्न है।
   - फूलगोबी में व्हिपटेल (whip tail)
   - सेम में स्कोल्ड रोग (scold disease)
   - नीबू में पाला धब्बा रोग (yellow spot disease)

क्लोरीन (Chlorine)

कार्य

1. यह विटामिन बी–1 2 तथा अन्य प्रकार के इंजाइमों का अनिवार्य घाटक होने के साथ प्रकाश संश्लेषण किया में ऑक्सिजन उत्पन्न करने तथा परासरण दाब को बनाये रखने के लिए भी आवश्यक माना जाता है।
2. यह अनेक प्रकार के फसलों में कार्बोहाइड्रेड उपापचयन में काफी उपयोगी होता है। साथ ही यह अनेक फलों के उत्पादन में अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह कोशिका रस में धनायन संतुलन बनाए रखता है।
3. इसकी कमी से पौधों में अमीनो अम्ल एकत्र हो जाते है। इस प्रकार यह प्रोटीन संश्लेषण को प्रभावित करता है। क्लोरीन एन्थोसायनिन्स का भी संघटक पदार्थ होता है।

कमी के लक्षण

1. क्लारीन की कमी से पौधें सूख जाते है। टमाटर में नई छोटी पत्तियाँ सूख जाती है। हरिमाहीनता उत्पन्न हो जाती है और पत्तियाँ नीचे की ओर ताँबे की रंग जैसी होकर जाती है।
2. इसकी कमी से पत्तागोबी की पत्तियाँ सिकुड़ जाती है। तथा बंदगोबी में गन्धहीनता उत्पन्न हो जाती है।
3. इसकी कमी से चुकन्दर, गााजर, गेहूँ, जौ तथा कपास के उत्पादन में गिरावट आती है।

निकेल (Nickel)

कार्य :

1. निकेल का मृदा में प्रयोग करने या पार्णीय छिड़काव करनक से पौधों का विकास अच्छी तरह से होता है। इसकी उपस्थिति से पत्तियों में यूरिया की सान्द्रता कम होती है तथा यूरियेज इंजाइम की क्रियाशीलता बढ़ती है।
2. यह बीजों की जीवन क्षमता, अंकुरण दर तथा जड़ों को मजबुती प्रदान करता है। यह बीजों या दानों में पोषक तत्वों के स्थानान्तरण में सहायक होता है।
3. यह नाइट्रोजन उपापचयन में भी मुख्य भुमिका निभाता है। यह राइजोबिया में हाइड्रोजिनेज इंजाइम की क्रियाशीलता बढ़ाने में सहायक होता है।

कमी के लक्षण

1. इसकी कमी से यूरियेज इंजाइम की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। फलस्वरुप पत्तियों में यूरिया एकत्र होती रहती है जिससे पत्तियों का अग्रभाग पहले पीला पढ़ता है तथा बाद में ऊतकों के मरने के कारण सूख जाता है।
2. इसकी कमी से पौधे अल्प समय मे ही परिपक्व हो कर मर जाते है। इसकी कमी से पत्तियों में विकृति आ जाती है जिसे माऊस इसर के नाम से जानते है।
3. इसकी कमी से पादप ऊतकों में यूरिया एकत्र होता है मथा अमीनो अम्ल मे कमी आती है।
4. इसकी कमी से गेहूँ, जौ तथा जई की नई पत्तियाँ पीली पड़ जाती है तथा पत्तियाँ आकार में छोटी रह जाती है एवं ऊपर की तरफ इनका विकास कम होता है।
5. इसकी कमी से अरजिनेज (प्रोटीन का मुख्य अवयव) मथा ग्लूटरमिन सिन्थेटेज की क्रियाशीलता में कमी आती है।

तालिका : 2 मृदा में पोषक तत्वों की कमी को दूर करने के उपाय एवं छिड़काव के द्वारा पौधों में कमी को दूर करना

पोषक तत्व	मृदा में उपलब्धता की निर्णायक सीमा	पोषक तत्वों की मात्रा किलो ग्रा./हे.	उर्वरक का नाम एवं प्रयोग
नत्रजन	उपलब्ध नत्रजन 280 किलो. ग्रा./हे0	विभिन्न फसलों की संस्तुति के अनुसार	यूरिया की 1/3 मात्रा का उपयोग बुआई के समय एवं यूरिया की 2/3 मात्रा दो से तीन बार में फसल बढ़वार के समय (कल्ले बनते समय, बाली निकलते समय तथा दाने बनते समय)
		10 किग्रा. प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	2.0 प्रतिशत यूरिया विलयन का निर्माण छिड़काव
फॉस्फोरस	उपलब्ध फॉस्फोरस 10 किलो. ग्रा./हे0	विभिन्न फसलों की संस्तुति के अनुसार	डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी.) या सिंगल सूपर फॉस्फेट (एस. एस.पी.) या नाइट्रो– फास्फेट का उपयोग केवल बुआई के समय करना चाहिए
पोटेशियम	उपलब्ध पोटेशियम 120 किलो. ग्रा./हे0	विभिन्न फसलों की संस्तुति के अनुसार	1.0 प्रतिशत म्यूरेट आफ पोटाश विलयन का पर्णीय छिड़काव
सल्फर	उपलब्ध सल्फर 10 मिली ग्रा./किग्रा.	25 किग्रा. सल्फर प्रति हे. मध्यम गठन वाली मृदा के लिए तथा भरी गठन वाली मृदा में 50 किग्रा. सल्फर प्रति हे. का उपयोग	150–200 किग्रा जिप्सम प्रति हे. साथ ही सिंचाई करना आवश्यक हैं
लोहा*	4.5 मिली ग्रा./किग्रा. (डी.टी.पी.ए. निष्कर्षित)	25–50 किग्रा. प्रति हे.	फेरस सल्फेट का मृदा में उपयोग
		2.5 किग्रा. प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	1–3 प्रतिशत फैरस सल्फेट, 0.5 प्रतिशत चूना विलयन के दो से तीन छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर
मैग्नीज*	2.0 मिली ग्रा./किग्रा. (डी.टी.पी.ए. निष्कर्षित)	10–25 किग्रा. प्रति हे.	मैंगनीज सल्फेट का मृदा में उपयोग
		2.5 किग्रा. प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	1.0 प्रतिशत मैंगनीज सल्फेट, 0.25 प्रतिशत चूना विलयन के दो से तीन छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर
जस्ता*	0.6 मिली ग्रा./किग्रा. (डी.टी.पी.ए. निष्कर्षित)	25 किग्रा. प्रति हे.	मध्यम गठन वाली मृदा में जिंक सल्फेट का मृदा उपयोग
		25–30 किग्रा. प्रति हे.	भारी गठन वाली मृदा में जिंक सल्फेट का मृदा उपयोग
		2.5 किग्रा. जिंक सल्फेट, 1.5 किग्रा. चूना प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट, 0.25 प्रतिशत चूना विलयन के दो से तीन छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर (500 लीटर पानी प्रति हे.)
तांबा*	0.2 मिली ग्रा./किग्रा. (डी.टी.पी.ए. निष्कर्षित)	4 किग्रा. प्रति हे.	कोपर सल्फेट का मृदा उपयोग
		0.125 किग्रा. प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	0.025 प्रतिशत कोपर सल्फेट, 0.01 प्रतिशत चूना विलयन के दो से तीन छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर (500 लीटर पानी प्रति हे.)
बोरोन*	0.5 मिली ग्रा./किग्रा. (गर्म जन विलयशील)	10 किग्रा. प्रति हे.	बोरोन मृदा में उपयोग
		2–3 किग्रा. प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	0.2 प्रतिशत बोरिक एसिड या सोल्यूबार विलयन के दो तीन पर्णीय छिड़काव
मोलिब्डेनम**	0.2 मिली ग्रा./किग्रा. (एसिअथ्क अमोनियम ऑक्जेलिक एसिड निष्कर्षित)	5–10 किग्रा. प्रति हे.	अमोनियम मोलिब्डेट
		1.0 किग्रा. अमोनियम मोलिब्डेट प्रति 500 लीटर पानी प्रति हे.	0.1–0.3 प्रतिशत अमोनियम मोलिब्डेट विलयन के दो से तीन छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर (500 लीटर पानी प्रति हे.)

* फसल पर छिड़काव मृदा उपयोग की अपेक्षा अधिक लाभकारी होता है। **बीज उपचार/50–100 ग्राम मोलिब्डेनम अत्यधिक उपयोगी है।

❋❋❋

मुख्य शस्य फसलों में खरपतवार प्रबन्धन

रणवीर कुमार यादव, एस.एल. मून्दडा एवं शंकर लाल यादव
कृषि अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर, राजस्थान कृषि महाविघालय उदयपुर एवं कृषि अनुसंधान उप केन्द्र खानपुर, झालावाड

खरपतवार वे पौधे है जो बिना चाहे खेतों में फसलों के साथ उग जाते है। उनकी उपस्थिति खेतों में किसान के महत्व की नहीं होती पर दूसरी जगह इनका उपयोग औषधियों या अन्य उपयोग में किया जा सकता है।

खरपतवारों का फसलों में प्रभाव

- खरपतवारों द्वारा फसली पोधों के विकास एवं वृद्धि में कमी होती है, जिसके फलस्वरूप उत्पादकता में गिरावट होती है।
- खरपतवार फसलों के कीटों एवं रोगकारकों को आश्रय प्रदान करते है जिससे फसलों में रोग एवं कीटों की समस्या अधिक होती है।
- कंटीले खरपतवार फसलों की कटाई में व्यवधान डालते हैं।
- खरपतवारों के बीजों की फसली अनाज के साथ उपस्थिति से फसल गुणवत्ता में कमी आती है।
- अनेक खरपतवारों जैसे गाजर घास आदि के परागकणों द्वारा मनुष्यों में श्वास सम्बन्धी विकार हो जाते है।
- खरपतवारों द्वारा पशु उत्पाद जैसे दूध, दही आदि की गुणवत्ता में कमी आती है साथ ही ये पशुओं में रोग पैदा करते है। जिससे कभी–कभी पशुओं की मृत्यु तक हो जाती है।
- जलीय खरपतवार सिंचाई व्यवस्था को अवरूद्ध मछली उत्पादन में कमी एवं झीलों की सुन्दरता को प्रभावित करते है।

खरपतवार फसल प्रतिस्पर्धा : खरपतवार फसलों के साथ विभिन्न कारकों के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। यह भूमि के ऊपर एवं मृदा में नीचे भी हो सकती है जो निम्नलिखित प्रकार से है।

- **पोषक तत्वों के लिए :** खरपतवार फसलों में पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। खरीफ फसलों में रबी मौसम की फसलों की तुलना में अधिक क्षति होती है। सामान्यतः खरपतवार फसलों को प्राप्त होने वाली 47 प्रतिशत नाइट्रोजन, 42 प्रतिशत फास्फोरस, 50 प्रतिशत पोटाश, 39 प्रतिशत कैल्सियम और 24 प्रतिशत मैग्नीशियम तक का उपयोग कर लेते है।

- **मृदा नमी के लिए :** नमी के लिए खरपतवार फसलों से प्रतिस्पर्धा करते है। यह शुष्क मौसम में अधिक होती है क्योंकि खरपतवारों की जड़ें मृदा में अधिक गहराई तक जाती है। साथ ही इनका उत्सर्जन तुल्यांक भी ज्यादा होता है।

- **प्रकाश के लिए :** फसल की प्रारम्भिक अवस्था में यह प्रतिस्पर्धा अधिक होती है क्योंकि खरपतवारों की सघनता के कारण से छाया का प्रभाव फसली पौधों पर होता है जिसमें उनकी वृद्धि रूक जाती है।

खरपतवारों के फैलने के तरीके

- खरपतवारों के बीजों का फसली बीजों एवं वानस्पितक प्रबद्धकों के मिश्रण होने से।
- कच्ची गोबर की खाद के प्रयोग से।
- कृषि में उपयोग होने वाली मशीनों एवं यंत्रों द्वारा।
- पालतू एवं जंगली जानवरों द्वारा मुख्यतः कांटेदार बीजों वाले खरपतवारों का फैलाव।
- सिंचाई, नालियों एवं नहरों के पानी द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर फैलाव।

तालिका 1: विभिन्न फसलों में खरपतवारों द्वारा पोषक तत्वों का अवशोषण

फसल	नाईट्रोजन किग्रा./हे.	फास्फोरस किग्रा./हे.	पोटाश किग्रा./हे.
धान	20-37	5-14	17-48
गेंहूँ	20-90	2-13	28-54
मक्का	23-59	6-10	16-32
ज्वार	36-46	11-18	31-47
चना	29-55	3-8	15-72
मटर	61-72	7-14	21-105
मसूर	39.0	5.0	21.0
मूंग	20-45	4-20	30-90
अरहर	28.0	24.0	14.0
मूंगफली	15-39	5-9	21-40
सोयाबीन	26-55	3-11	43-102
सरसों	22.0	3.0	12.0
अलसी	32.0	3.0	13.0
गन्ना	35-162	24-44	135-242

तालिका 2 : फसलों में फसल खरपतवार प्रतिस्पर्धा का क्रांतिक समय एवं उपज में कमी

फसल	क्रांतिक समय बुवाई के बाद दिन	उपज के कमी प्रतिशत
खाद्यान्न फसलें		
धान (सीधी बुआई)	सम्पूर्ण फसल अवधि	10-100
धान (रोपाई)	20-40	15-38
मक्का	30-45	40-60
ज्वार	30-45	06-40
बाजरा	30-45	15-50
गेहूं	30-45	26-38
दलहनी फसलें		
अरहर	15-60	20-40
मूंग	15-30	30-50
उड़द	15-30	30-50
चना	30-60	15-26
मटर	30-45	20-30
तिलहनी फसलें		
सोयाबीन	15-45	40-60
मूंगफली	40-60	40-50
सूरजमुखी	30-45	33-50
अरण्डी	30-60	30-50
कुसुम	15-45	35-60
तिल	15-45	17-41
सरसों	15-40	15-30
अन्य फसलें		
गन्ना	15-60	20-30
कपास	15-60	40-50

तालिका 3 : फसलों में उगने वाले प्रमुख खरपतवार

फसल	प्रमुख खरपतवार
गेहूं	बथुआ, हिरनखुरी, कृष्णनील, अकरी, गेहूं का मामा
रबी दलहनी एवं तिलहनी फसले	प्याजी, पोहली, जंगली मटर, बनसोय, अकरी, बथुआ, हिरनखुरी
धान मक्का, ज्वार एवं बाजरा	सावा, कोदा, कनकौआ, जंगली, जूट मोथा दुबघास, गुम्भा, मकोटा, कन कौआ, सफेद मुर्ग, सावा, मोथा आदि
खरीफ दलहनी एवं तिलहनी	महकुआ, हजारदाना, दुद्धी, कनकौआ सफेद मुर्ग, सवां, मोथा आदि।

खरपतवारों की रोकथाम : खरपतवारों का नियंत्रण विभिन्न विधियों द्वारा किया जाता है जो निम्नलिखित है।

1. **निवारण विधि:** इस विधि में सभी क्रियाएं है जो जिनके द्वारा खेतों में खरपतवारों के प्रवेश को रोका जा सकता है, जैसे प्रमाणित बीज जो खरपतवार रहित हो का उपयोग, अच्छी सड़ी गली गोबर की खाद का प्रयोग, सिंचाई नालियों की सफाई, खेत की तैयारी एवं बुआई के प्रयोग में किये जाने वाले यंत्रों के प्रयोग से पूर्व अच्छी तरह से साफ–सफाई आदि।

2. **शस्य क्रियाए :** शस्य क्रियाऐं जैसे अच्छी किस्मों की बुआई पूर्व बीज उपचार, सही समय पर बुआई, फसल चक्र अपनाना, गर्मी की गहरी जुताई, न्यूनतम कर्षण, मेड़ो के क्षेत्र में कमी एवं जल निकास आदि। इन क्रियाओं द्वारा खरपतवारों की संख्या में अत्यधिक कमी हो जाती है जिसमें इनका नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है।

3. **मृदा सौरीकरण :** इस तकनीक के अन्तर्गत विभिन्न मोटाई की पारदर्शी पॉलीथीन सीट (50–100 मिलीमाइक्रोन) को समतल नमीयुक्त मिट्टी की ऊपरी सतह पर फसल की बुआई के पहले 4–6 सप्ताह तक फैलाकर मिट्टी की ऊपरी सतह का तापमान बाहरी तापमान से 8–12 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा किया जाता है। इससे मिट्टी की ऊपरी सतह में जमा खरपतवारों के बीजों के अंकुरण होने की शक्ति कम या निष्क्रिय हो जाती है।

4. **यांत्रिक विधियां :** यांत्रिक विधि में विभिन्न कृषि उपकरणों जैसे स्पाइक टूथ हैरो, कल्टीवेटर, व्हील टो, हलेड़ हेरो, होर्स हो आदि के द्वारा कर्षण क्रियाओं के माध्यम से खरपतवार नियंत्रण किया जाता है।

5. **रासायनिक नियंत्रण :** रासायनिक विधि में विभिन्न रसायनों (शाकनाशी) जो खरपतवारों को वृद्धि रोक देते है या नष्ट कर देते है ये खरपतवारों का नियंत्रण किया जाता है। वर्तमान समय में यह विधि सबसे अधिक कारगर है।

शाकनाशियों के फायदे

- मानसून के समय जब लगातार बारिश होती है वहां यांत्रिक या हाथ द्वारा खरपतवार नियंत्रण नहीं किया जा सकता अतः उस समय खरपतनाशियों का प्रयोग आसानी से किया जा सकता है।
- खरपतवारनाशियों द्वारा खरपतवारों को अंकुरण पूर्व ही नष्ट कर किया जा सकता है। अतः इनसे समय पर खरपतवारों का नियंत्रण किया जाता है।
- बाहरी संरचना में समान दिखने वाले खरपतवारों का आसानी से नियंत्रण किया जा सकता है जो कि अन्य विधियों में संभव नहीं है। जैसे गेहूं का मामा गेहूं की फसल में।
- खरपतवानाशियों के द्वारा बहुवर्षीय खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है।

- कंटीले खरपतवारों के नियंत्रण में भी खरपतवारनाशी बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसका प्रयोग मृदा क्षरण वाली भूमियों में भी आसानी से किया जा सकता है।

खरपतवारों के नियंत्रण के आधार पर खरपतवारनाशी दो प्रकार के होते है। वर्णात्मक शाकनाशी तथा अवर्णात्मक शाकनाशी।

1. **वर्णात्मक शाकनाशी :** इनमें वे रासायनिक पदार्थ या शाकनाशी आते है तो जो किसी विशेष जाति के खरपतवारों को नष्ट करते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य फसलों को हानि नहीं पहुंचाते है। जैसे 2–4डी चौड़ी वाले खरपतवारों का नियंत्रण करता है।
2. **अवर्णात्मक शाकनाशी :** इस श्रेणी के शाकनाशी किसी भी वनस्पति के सम्पर्क में आने से उन्हें हानी पहुंचाते है यह दो प्रकार के होते है।

   बुआई पूर्व : बुआई से पूर्व उन खरपतवारनाशियों का प्रयोग किया जाता है जिनका सूर्य के प्रकाश से विघटन हो जाता है जैसे फ्लूक्लोरेलिन

   बुआई के बाद एवं अंकुरण से पूर्व अवर्णात्मक शाकनाशी : अंकुरण से पूर्व उपयोग किये जाने वाले खरपतवारनाशी मृदा में क्रियाशील होते है। अतः इनके छिड़काव के समय मृदा में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

खरपतवारनाशियों के भण्डारण एवं रसायनों के प्रयोग से सावधानियां

- खरपतवारनाशियों को उर्वरक, बीज, खाद्य पदार्थो एवं बच्चों की पहुंच से दूर रखना चाहिए।
- खरपतरवारनाशी घोल तैयार करने से पूर्व लेबल को अच्छी तरह से पढ़ लेना चाहिए।
- छिड़काव यंत्र को अच्छी तरह से धो लेना चाहिए।
- शाकनाशियों का प्रयोग खुले एवं शांत मौसम में ही करे। जहां अगले 4–6 घंटे में वर्षा होने की संभावना न हो।
- छिड़काव के दौरान किसी प्रकार का खाना एवं धूमपान का सेवन नहीं करना चाहिए।
- छिड़काव हवा की विपरित दिशा में न करे क्योंकि इससे छिड़कावकर्ता के ऊपर रासायनिक पदार्थ के छिंटे गिरते हैं।
- छिड़काव के दौरान अलग नोजल बंद हो जाये तो मुंह द्वारा फूंक मारकर साफ न करे।
- शाकनाशियों के छिड़काव के समय रक्षात्मक वस्त्र, बूट, दस्ताने, धूप का चश्मा, मास्क आदि का इस्तेमाल करें।
- छिड़काव पूरा हो जाने के बाद खाली डिब्बे को जला दे या जमीन में दबा दे।
- छिड़काव करने के बाद अपने हाथ या अन्य अंगो को साबुन से अच्छी तरह से धो लेना चाहिए।
- खरपतवारनाशियों की प्रयोग मात्रा क्षेत्र में अनुशंसित मात्रा के अनुसार करे। हल्की मृदाओं में कम मात्रा तथा भारी मृदाओं में अधिक मात्रा में प्रयोग करें।

तालिका 4 : फसलों में प्रयोग किये जाने वाले महत्त्वपूर्ण खरपतवानाशी

फसल	खरपतवारनाशी	मात्रा ग्राम/हे.	व्यापारिक मात्रा ग्राम/हे.	प्रयोग का समय
धान	ब्यूटा क्लोर	1000-1500	2000-3000	अंकुरण पूर्व
	पेंडीमेथालीन	1000-1250	3000-4500	अंकुरण पूर्व
	एनिलोफॉस	300-400	1200	अंकुरण पूर्व
	प्रेटिलाक्लोर	750-1000	1500	अंकुरण पूर्व
मक्का	एट्राजीन	500-1000	1000-2000	अंकुरण पूर्व
ज्वार एवं बाजरा	मेट्रीब्यूजीन	175-210	300	अंकुरण पूर्व
दलहनी एवं	पेंडीमेथालीन	1000	3300	अंकुरण पूर्व
तिलहनी	फ्लूक्लोरेलिन	1000-1500	2000-3000	बुआई पूर्व
फसलें	ट्राइफ्लूरेलिन	1000-1500	2000-3000	बुआई पूर्व
कपास	डायूरान	750-1000	900-1150	बुआई पूर्व
गेंहूँ	2, 4–डी	500-1000	-	बुआई के 30–35 दिन बाद
	आइसोप्रोट्युरॉन	750-1000	1000-1250	बुआई पूर्व के 30–35 दिन बाद
	पेंडीमेथालीन	1000	3300	अंकुरण पूर्व
	क्लोडिनाफॉप प्रोपार्जिल	60	400	बुआई के 30–35 दिन बाद
	फेनाक्साप्रॉप	100-120	100-120	बुआई के 30–35 दिन बाद

आलू फसल में कुशल जल प्रबन्धन एंव पौध संरक्षण

धूनी लाल यादव, उदिति धाकड़, राजेन्द्र यादव एंव प्रताप सिंह
कृषि अनुसंधान केन्द्र,कोटा एंव कृषि महाविघालय,कोटा

राजस्थान की सब्जियों में आलू की फसल एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योंकि वार्षिक उत्पादन की तुलना में इसकी खपत अधिक है। इसकी खेती वातावर्णीय अनुकूल परिस्थितियों के साथ–साथ सामान्यतया सिचिंत क्षेत्रों में की जाती है। प्रदेश में आलू मुख्यतः कोटा, धौलपुर, भरतपुर, गंगानगर, सिरोही, अलवर, बून्दी आदि जिलों में उगाया जाता है जिसका क्षेत्र जल की उपलब्धता के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। तापक्रम एवं जल, आलू के उत्पादन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक है ।आलू के अच्छे अंकुरण व जमाव के लिए 25 डिग्री सेल्सियस एवं उत्पादन व वानस्पतिक वृद्धि के लिए 20 डिग्री सेल्सियस एवं कन्द निर्माण के लिए 17–20 डिग्री सेल्सियस औसत तापक्रम चाहिए ।आलू की फसल उत्तरी भारत में सिंचाई की निश्चितता होने पर शरद काल में सितम्बर माह में बोई जाती है। प्रदेश के कोटा संभाग में आलू के बुवाई का उचित समय अक्टूबर माह के अंतिम सप्ताह से नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह तक है, देरी से लगाने पर उपज पर विपरीत प्रभाव पडता है। अतः आलू की बुवाई भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में होने के कारण, इसमें कुशल जल प्रबन्धन अति आवश्यक हो जाता है।

आलू एक शाकीय पौधा है जिसका विरल एवं उथला जड़ विन्यास होता है। आलू के पौधों की पत्तियों को हमेशा स्फीति व उच्च प्रकाश संश्लेषण दर बनाए रखने हेतु रन्ध्रों को खुला रखना अति आवश्यक है। अतः आलू की फसल को हमेशा प्राप्य जल उपलब्ध रहना चाहिए। आलू की फसल की जल मांग 400–600 मिलीमीटर है। किसी फसल की जल मांग, जल की मात्रा है जो उसके उपभोगिक–उपयोग एवं अनचाहे ह्यास (गहन अन्तःस्रवण व सतह अपवाह) के रूप में आवश्यक होती है। आलू की उपज एवं गुणवत्ता मुख्यतः पोषक तत्वों के अलावा भूमि में जल एवं वायु के संतुलन पर मुख्य रूप से निर्भर करती है जो कि उन्नत जल प्रबन्धन द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

सिंचाई निर्धारण : आलू की फसल में सिंचाई निर्धारण विभिन्न कारकों पर आधारित रहता है जिनमें मुख्य रूप से मृदा जल धारण क्षमता, फसल अवस्था, जलवायुवीय कारक एवं किस्मों का जड़ीय तंन्त्र आदि है। आलू में सिंचाई निर्धारण के विभिन्न तरीके काम में लिए जाते हैं जिनमें से कुछ मुख्य निम्न प्रकार हैं।

मृदा नमी–तनाव अवधारणा : इस अवधारणा में सिंचाई का निर्धारण तब किया जाता है जब मृदा नमी तनाव एक निश्चित स्तर तक बढ़ जाता है। इस विधि में जड़ीय क्षैत्र में नमी को क्षैत्र धारिता के स्तर तक सिंचाई द्वारा लाया जाता है। मृदा नमी तनाव को पृष्ठतनावमापी (टेन्सियोमीटर) द्वारा मापा जाता हैं। प्रयोगों में आद्रस्तर आधार पर यह पाया गया कि आलू में 15–20 सेमी. मृदा गहराई पर 10–12 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करने से अधिक उपज प्राप्त होती है। इससे पौधे के जड क्षैत्र में 63 प्रतिशत तक नमी बनी रहती है।

उपलब्ध मृदा नमी अपक्षय अवधारणा : कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा पर प्रयोग में यह पाया गया कि क्षैत्र धारिता नमी का 15–30 प्रतिशत तक अपक्षय होने पर भी मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहती है।किन्तु इससें अधिक नमी का अपक्षय होने पर सिंचाई करनी होती है।

जलवायुवीय अवधारणा : फसलों की सिंचाई निर्धारण एवं जल माँग में जलवायु कारकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।इस अवधारणा में संचयी पान वाष्पन एवं सिंचाई जल (सिंचाई जल गहराई) के अनुपात के अनुसार सिंचाई निर्धारण करते है। कोटा क्षैत्र में सिंचाई जल गहराई, 60 मि.मी. लेते हुए यदि संचयी पान वाष्पन अनुपात 1.5 या संचयी वाष्पन 20–25 मि.मी. पर सिंचाई करे तो आलु की अच्छी उपज प्राप्त होती है।

क्रान्तिक अवस्था अवधारणा : इसमें फसल की विभिन्न अवस्थाओं का पता लगाया गया है जिन पर सर्वाधिक जल की माँग होती है और उन अवस्थाओं पर सिंचाई करने से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है । कोटा संभाग में सामान्यतः आलू में स्टोलन बनने एवं कन्द विकसित होने की अवस्थाओं पर सिंचाई देना आवश्यक है।

सिंचाई गहराई : आर्दश स्थिति में सिंचाई जल की मात्रा प्रत्येक सिंचाई में इतनी अवश्य होनी चाहिए कि मृदा नमी जड़ीय क्षेत्र में क्षेत्र धारिता के बराबर हो और पूर्व मृदा नमी अन्तर पूर्ण या समाप्त हो जाए। सिंचाई गहराई प्रत्येक फसल के लिए अलग–अलग होती है। कोटा संभाग में आलू की फसल में 60 मि.मी. या 6 से.मी. सिंचाई गहराई निर्धारित की गई है।मृदा नमी अपक्षय सूत्र द्वारा आसानी से निकाला जा सकता हैं।

$$\text{मृदा नमी कमी} = \frac{\text{क्षैत्र धारिता पर नमी \%} - \text{सिंचाई पूर्व मृदा नमी \%} \times \text{मृदा वृहद घनत्व} \times \text{मृदा परिच्छेदिका गहराई}}{100}$$

आलू में सिंचाई की उन्नत विधियाँ

आलू की फसल में सिंचाई में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि खेत में पर्याप्त एवं एकसार पानी लगे एवं गहन अन्तस्वणः व सतह अपवाह में कम से कम पानी का ह्यास हो तथा पौधों की अच्छी वृद्धि एवं विकास हेतु मृदा जल एवं मृदा वायु का जड़ीय क्षैत्र में उचित अनुपात बना रहे।

1. कूड़ /नाली विधि : इस विधि में खेत में एकान्तर पर मेड़/डोली एवं कूड/नाली बनाई जाती हैं। आलूओं की बुवाई मेड़ों/डोलियों पर एवं

सिंचाई कूँड़/नाली में की जाती है जिससे पानी केशिका प्रक्रिया द्वारा मेड़ों/ डोलियों के अन्दर व ऊपर तक पहुँचता है। कूड़ों में पानी लगने के बावजूद मेड़ों का वृहद घनत्व ज्यादातर कम रहता हैं जिससे जड़ीय क्षैत्र में मृदा जल एवं वायु का उचित अनुपात बना रहता है। कूड़ ज्यादातर लम्बे एवं खेत की नालियों के समानान्तर 60 सेमी की दूरी पर बैलों द्वारा या मेड़–कूड़ मेकर यंत्र द्वारा बनाए जा सकते है। कूड़ में सिंचाई करते समय मेड़ का केवल दो–तिहाई भाग ही पानी में डूबना चाहिए। कूड़ में पानी मेड़ के ऊपर तक या उनके ऊपर से होकर नही गुजरना चाहिए अन्यथा मृदा सतह के रन्ध्र बन्द हो जायेगे व मृदा का वृहदघनत्व बढ़ जायेगा और अन्ततः मृदा में अवायवीय स्थितियॉ उत्पन्न हो जाएगी जिससे बुवाई पश्चात कन्द सडकर खराब हो सकते हैं और अंकुरण व निर्गमन कम हो सकता है, विशेषकर जब मृदा का तापमान ज्यादा होगा। इसके अतिरिक्त मेडों/डोलियों पर पानी चढ़ जाने से उनका ऊपरी भाग कड़ा हो जाता है । इस कारण आलू की जड़े भली–भाँति नही फैलने से आलू समान रूप से नही बढ़ पाते। सम्पूर्ण कूड़ों को लम्बाई में पानी से न भरे अपितु जब कूड़/नाली की लम्बाई के 85 प्रतिशत भाग में पानी पहुँच जाए तो पानी बन्द कर अन्य कूड़ में जाने दे अन्यथा कूड़ के अन्तिम छोर पर पानी की अधिकता हो जायेगी एवं कभी–कभी पानी मेड़ों के ऊपर से निकल जायेगा।

कूड़ सिंचाई विधि की सिंचाई दक्षता क्यारी विधि से ज्यादा एवं फव्वारा व बूँद–बूँद विधि से कम होती है, यह ज्यादा से ज्यादा 50 प्रतिशत तक पहुँचती है क्योकि कुछ पानी का सतह अपवाह द्वारा, और यदि कूड़ की लम्बाई एवं ढाल कुछ ज्यादा हुआ तो कुछ पानी का सतह से नीचे गहन अन्तः श्रवण द्वारा भी, ह्यास हो जायेगा। कोटा संभाग में आलू की प्रजातियों की अवधि एवं वातावरणीय तापक्रम के उतार–चढाव अनुसार पलेवा के अतिरिक्त 4–6 सिंचाईयाँ पर्याप्त होती हैं। इस फसल की जल मांग कोटा संभाग में लगभग 40–42 से.मी. है। समान्यतः पलेवा द्वारा तैयार खेत में आलू लगाने के उपरान्त फसल अंकुरण के 80–90 प्रतिशत पूर्ण होने पर आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करनी चाहिए तथा जल भराव नहीं होने दें। भारी मृदाओं में 10–15 दिन तथा हल्की मृदाओं में 7–10 दिन के अन्तराल पर सिचाई करें परन्तु यह वातावरणीय परिस्थितियों के उतार–चढाव के अनुरुप घट बढ सकती है। डिहाल्मिंग के 10 दिन पूर्व सिंचाई बन्द कर देवे व इसके लगभग 15 दिनों के बाद आलू की खुदाई करें। आलू की खुदाई ज्यादा नमी होने पर नही करनी चाहिए अन्यथा आलू की गुणवत्ता, विपणन एवं परिवहन पर प्रतिकूल असर पड़ता हैं।

2. बूँद–बूँद (ड्रिप) सिंचाई : आलू में सिंचाई करने हेतु बूँद–बूँद सिंचाई पद्धति काफी अच्छी एवं दक्ष विधि है जिसमें ड्रिपर द्वारा पानी सीधे ही पौधों के जड़ीय क्षेत्र में धीरे–धीरे दिया जाता हैं। कूड़ विधि की तुलना में बूँद–बूँद सिंचाई पद्धति से सिंचाई करने से जल रिसाव एवं वाष्पन क्रिया द्वारा पानी का ह्यास काफी कम होता है। पानी की एक निश्चित मात्रा एकान्तर दिनों पर मृदा जल की कमी को पूर्ण करने के लिए दी जाती है। इस विधि द्वारा आलू के पौधों को आवश्यकतानुसार न केवल जड़ीय क्षेत्र में पानी दिया जाता है वरन् सिंचाई जल के साथ–साथ उर्वरक, कीटनाशक एवं खरपतवारनाशकों का भी प्रयोग किया जा सकता है। इस विधि में सिंचाई जल की मात्रा लगभग प्रतिदिन के 'उपभोग्य–उपयोग' के बराबर दी जाती हैं और इससे मृदा जल तनाव निश्चित स्तर तक बनाए रखने में सहायता मिलती है। ड्रिप सिंचाई से भूमि में सतत् जल उपलब्धता बनी रहती है जिससे जल एवं उर्वरकों का अधिकाधिक उपयोग होता है परिणामस्वरुप उपज एवं गुणवत्ता अच्छी प्राप्त होती है। सतही सिंचाई व कूड़ सिंचाई विधियों की तुलना में इस विधि में कम पानी की आवश्यकता होती है अतः कम पानी से अधिक क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है।

ड्रिप सिंचाई द्वारा आलू के आकार एवं संख्या में वृद्धि के कारण 50–60 प्रतिशत तक कन्द उपज में बढ़ोतरी होती है । जल प्रबन्धन परियोजना कोटा द्वारा सन् 2005–06 व 2006–07 में आलू में ड्रिप सिंचाई एवं उर्वरकों के प्रयोग (फर्टीगेशन) पर अनुसंधान किया गया परिणामों द्वारा यह पाया गया कि आलू की फसल में प्रत्येक 3 दिन के अन्तराल पर 75 प्रतिशत संचयी वाष्पन–बाष्पोत्सर्जन पर सिंचाई करने एवं दी जाने वाली सम्पूर्ण नत्रजन मात्रा को ड्रिप सिंचाई जल के साथ (फर्टीगेशन) देने से सतही सिंचाई की तुलना में लगभग 37 प्रतिशत पानी की बचत हुई एवं 45 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त हुई। उपरोक्त परीक्षण में सिचाई जल के साथ नत्रजन यूरिया के रुप में दी गई तथा उर्वरक की मात्रा इस प्रकार समायोजित की गई कि ड्रिपर में जाने वाले सिंचाई जल में 3 प्रतिशत से अधिक यूरिया नही हो। फास्फोरस तथा पोटाश की मात्रा सिफारिशानुसार बुवाई के समय मृदा में दी गई ।

आलू की जल उपयोग दक्षता में वृद्धि के अन्य तरीके

आलू की फसल की जल उपयोग दक्षता बढ़ाने हेतु जल प्रबन्धन के साथ–साथ अन्य उन्नत खेती के तरीकों को भी अपना आवश्यक है।

- **अच्छे जल उपयोगिता वाली किस्मों की बुवाई :** जल परिस्थितियों के अनुसार आलू की किस्मों का चयन करें। सीमित जल स्थिति में अगेती बुवाई करे तथा अल्प अवधि (75–90 दिनों) की किस्में जैसे कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी अशोका, कुफरी बहार, कुफरी सतलुज एवं सामान्य अवधि मध्यम देरी (90–105 दिनों) वाली किस्में जैसे – कुफरी बादशाह, कुफरी लालिमा, कुफरी ज्योति, कुफरी बहार, कुफरी चिपसोना 1, कुफरी चिपसोना 2 व कुफरी चिपसोना 3 की बुवाई करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है।
- **बुवाई का तरीका :** खेत में 45–60 सेमी. की दूरी पर 15–20 सेमी. ऊँची डोलियां बनाएं तत्पश्चात 20 सेमी. की दूरी पर बीज कन्दों को 7–8 सेमी. गहराई पर खुरपी की सहायता से लगायें। दूसरी विधि में, 45–60 सेमी. की दूरी पर नालियां बनाकर बीज कन्दों को 20 सेमी. की दूरी पर लगाएं

तत्पश्चात मिट्टी चढाकर डोलियां बना दें। ड्रिप सिंचाई में आलू की दो कतारों / डोलियों के बीच एक ड्रिप की लाइन डालें। बुवाई हेतु स्वस्थ बीज कन्द जिनका व्यास 3.5 – 4.0 से.मी. ,मझोले आकार व वजन 25–35 ग्राम हो काम में लें। कोटा सम्भाग के लिए कटे हुए कन्दों का बीज रुप में प्रयोग नही करें। शीतालय से लाए गये कन्दों को तुरन्त बुवाई के लिए प्रयोग में नही लाये, ऐसे कन्दों को छायादार, हवादार स्थान में तापक्रम के सामान्य होने तक रखें, फिर बुवाई करें। आलू की बुवाई, बुवाई मशीन द्वारा भी की जा सकती है।

- **पलवार का प्रयोग :** मैदानी क्षेत्रों में आलू बुवाई के बाद शुरुआत अवस्था में या तो कर्षण क्रिया या पलवार द्वारा वाष्पन–वाष्पोर्त्सजन की दर में कमी की जा सकती है जो कि आलू की उपज बढ़ाने में और अन्ततः जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में सहायक सिद्ध होती है। पलवार हेतु धान का पुआल, खरपतवार आदि काम में लिये जा सकते हैं। जहाँ दीमक का प्रकोप हो वहाँ पलवार के साथ में दीमक नियंत्रण करना आवश्यक हैं।

- **पोषक तत्व प्रबंन्धन :** सिंचाई जल एवं पोषक तत्वों का आलू की जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में सकारात्मक संबध पाया जाता हैं। विशेषकर नत्रजनीय एवं पोटाशिक उर्वरकों सहित पोषक तत्वों के सन्तुलित प्रयोग से फसल की वानस्पतिक वृद्धि अच्छी होती हैं जिससे फसल द्वारा शीघ्र भूमि ढक जाती है एवं वाष्पन क्रिया धीमी हो जाती है। उर्वरकों के साथ–साथ जैविक खादों–गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग भी भूमि की भौतिक दशा में सुधार के अलावा जल धारण क्षमता एवं वायुसंचार बढ़ाते है और अन्ततः जल उपयोग दक्षता बढ़ाने में सहायक सिद्ध होते हैं। कोटा संभाग में आलु की फसल में वुबाई से लगभग एक माह पूर्व 25 टन प्रति हैक्टर सडी गोबर की खाद या 10 टन वर्मीकम्पोस्ट भली–भाँति खेत में मिला देना चाहिए। इसके अलावा 187.5 कि.ग्रा. नत्रजन, 125 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 125 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई पूर्व कूड़ों में ऊर कर देना चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा वुबाई के 30–35 दिन बाद मिट्टी चढ़ाने के साथ देवें। मिट्टी की जॉच के आधार पर यदि आवश्यक हो तो सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग करना भी लाभकारी रहता है।

- **खरपतवार नियंत्रण द्वारा जल बचत :** आलू की फसल में खरपतवार न केवल पानी वरन पोषक तत्वों एवं जगह आदि के लिए भी प्रतिस्पर्धा करते है। आलू की फसल में उगने वाले खरपतवार लगभग 43 किलो नत्रजन, 8 किलो फास्फोरस एवं 49 किलो पोटाश प्रति हैक्टर उदग्रहण कर लेते हैं। परिणामस्वरुप आलू वृद्धि एवं उपज में कमी (10–80 प्रतिशत) करते हैं चाहे जल ह्यास की पूर्ति सिंचाई द्वारा कर दी जाए। शस्य क्रियाओं (निराई–गुडाई) या खरपतवारनाशकों द्वारा खरपतवारों को नियंत्रित करने से न केवल जल उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है बल्कि सिंचाई जल के आर्थिक उपयोग में भी लाभ होता हैं। कंदों की वुबाई के 30–35 दिन बाद जब पौधे 8–10 सेमी. के हो जाए तो खरपतवार निकाल कर पौधों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए। यदि खरपतवारनाशकों द्वारा नियंत्रण करे तो फ्लूक्लोरेलिन 1.0 किग्रा. प्रति हैक्टर बुवाई से पूर्व छिड़काव कर भूमि में मिला दें।

- **बुवाई पूर्व कन्दों को पानी में डूबोकर बोना :** यदि बुवाई पूर्व कन्दों को पानी में 30मिनट डूबोकर बोयें तो आलू का अंकुरण व जमाव अच्छा होता हैं तथा प्रथम सिंचाई जल की बचत हो सकती है। यदि पानी में डाइथेन–एम 45, 0.5 प्रतिशत या 2 ग्राम थायरम 1 ग्राम बावस्टीन प्रति लीटर पानी के घोल में डालकर कन्दों को 20–30 मिनट तक डूबाया जाय तथा छाया में सुखाकर बोया जाय तो कन्दों के सड़ने को भी रोका जा सकता है। तना उत्तक क्षय रोग से बचाव हेतु इमेडोक्लोरप्रिड दवा का 0.1 प्रतिशत घोल बनाकर बीज कन्दों को 10 मिनट तक डुबोए एवं सूखने पर लगायें।

- **पौध संरक्षण**

आलू की फसल की सतत् वानस्पतिक वृद्धि एवं अच्छे उत्पादन के लिए जल उपलब्धता अति आवश्यक हैं। पानी की ज्यादा कमी एवं अधिकता होने से विभिन्न कीट एवं रोगों का प्रकोप हो सकता हैं। जल की कमी होने पर सामान्य स्केब के शुरु होने की सम्भावना होती है। इसके विपरीत, कम तापक्रम एवं अधिक नमी होने से काली रुसी (ब्लैक स्कर्फ), तना विगलन (स्कलेरोसियम रोट), स्कलेरोटिनीयां,,व्लाइटस, सड़न एवं बेक्टीरियल विल्ट जैसे रोगो के लगने की संभावना होती है। खेत में अधिक दिनों तक पानी भरा रहने की स्थिति में उख्टा एवं अंगमारी बीमारी भी उत्पन्न हो सकती है। यदि आलू के खेत में ज्यादा नमी एवं अधिक तापमान एक साथ हो जाए तो कन्दों का मृदु गलन प्रारम्भ हो सकता है। ऐसा शुरुआत में हो जाए तो जल प्लावन करने से मृदु सड़न के कारण अंकुरण कम व छितरा होता है। मृदा में उचित नमी होने से कटवर्ग एवं माइटस का प्रकोप कम रहता है। आलू का कन्दीयपतंगा एवं इसके लारवा मिट्टी में दरारे आने पर बढ़ जाते है। अतः भूमि को सूखने नही देना चाहिए। यदि कीट–रोगों का प्रकोप बढ़ने लगे तो संस्तुतिनुरुप रासायनिक दवाओं का प्रयोग कर कीट–रोग नियंत्रण करें।

❋❋❋

सर्दियों में करें बटन मशरूम का उत्पादन

कल्पना यादव, सरिता एवं मालचन्द जाट
राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, उदयपुर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

बटन मशरुम सर्वाधिक लोकप्रिय एवं स्वादिष्ट मशरुम है। इसमें भी पोष्टिक तत्व अन्य मशरुम की तरह ही है। इस मशरूम का उत्पादन सर्दियों में ही किया जा सकता है। तापमान 20 से कम एवं 70 प्रतिशत से अधिक आर्द्रता की आवश्यकता होती है। बटन मशरूम की खेती एक विशेष प्रकार की खाद पर ही की जा सकती है जिसे कम्पोस्ट कहते है। कम्पोस्ट दो प्रकार से तैयार की जा सकती है।

(अ) लम्बी विधि द्वारा

(ब) अल्प–विधि द्वारा

(अ) लम्बी विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करना : इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने के लिए किसी विशेष मूल्यवान मशीनरी अथवा यंत्र की जरूरत नही पडती है। कम्पोस्ट बनाने के लिये विभिन्न प्रकार की सामग्री काम में ली जा सकती है। कम्पोस्ट बनाने के विभिन्न सूत्र निम्न है:–

सूत्र क्रमांक 1: गेहूँ/चावल का भूसा–1000 किलोग्राम, अमोनियम सल्फेट/कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट–27 किलोग्राम, सुपरफास्फेट–10 किलोग्राम, यूरिया–17 किलोग्राम, गेहूं का चौकर–100 किलोग्राम , जिप्सम 36 किलोग्राम।

सूत्र क्रमांक 2: गेहूँ/चावल का भूसा–1000 किलोग्राम, गेहूं का चापड–100 किलोग्राम, सुपर फास्फेट–10 किलोग्राम, कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट सल्फेट (20 प्रतिशत)–28 किलोग्राम, जिप्सम–100 किलोग्राम, यूरिया (46 प्रतिशत नाइट्रोजन) 12 किलोग्राम, सल्फेट या न्यूरेट आफ पोटाश–10 किलोग्राम, नेमागान (60 प्रतिशत)–135 मि.ली. नोलासेस–175 लीटर।

सूत्र क्रमांक 3: गेहूं/चावल का भूसा–(1:1)–1000 किलोग्राम, कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट–30 किलोग्राम, यूरिया–132 किलोग्राम, गेहूं का चौकर–50 किलोग्राम, जिप्सम 66 किलोग्राम, लिण्डेन (10 प्रतिशत)500 ग्राम।

उपरोक्त सूत्रों के अलावा राजस्थान के वातावरण अनुसार उपयुक्त सूत्र निम्न है।

गेहूं का भूसा– 1000 किलोग्राम, गेहूँ का चापड़ 200 किग्रा, यूरिया:– 20 किलो, जिप्सम 35 किलो, लिण्डेन 1 किग्रा, फार्मलिन 2 लीटर।

(ब) अल्प विधि द्वारा

सूत्र क्रमांक 1: गेहूँ/चावल का भूसा–1000 किलोग्राम, गेहूं का चौकर–50 किलोग्राम, मुर्गी की खाद–40 किलोग्राम, यूरिया–185 किलोग्राम, जिप्सम–67 किलोग्राम, लिन्डेन डस्ट–1 किलोग्राम।

सूत्र क्रमांक 2: गेहूँ/चावल का भूसा–1000 किलोग्राम, मुर्गी की खाद–400 किलोग्राम, चावल का चौकर–68 किलोग्राम, ब्रुवर के दाने–73 किलोग्राम, यूरिया 20 किलोग्राम, कपास के बीज का चौकर–17 किलोग्राम, जिप्सम 34 किलोग्राम।

सूत्र क्रमांक 3: गेहूँ/चावल का भूसा–1000 किलोग्राम, मुर्गी की खाद–400 किलोग्राम, ब्रुवर के दाने–72 किलोग्राम, यूरिया–14.5 किलोग्राम, जिप्सम 30 किलोग्राम

दीर्घ विधि से कम्पोस्ट तैयार करने की विधि: इस विधि द्वारा कम्पोस्ट को कम्पोस्टिंग शेड में ही तैयार किया जाता है। इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने में करीब 28 दिन लगते है। इसमें प्राप्त कम्पोस्ट की उपज लघु विधि द्वारा तैयार कम्पोस्ट से अपेक्षाकृत कम मिलती है सबसे पहले समतल एवं साफ फर्श पर भूसे को दो दिन तक पानी डालकर गीला किया जाता है। इस गीले भूसे में जिप्सम के अलावा सारी सामग्री को मिलाकर उसे थोडा और गीला करें। यह बात ध्यान में रखे कि पानी उसमें से बहकर बाहर नहीं निकले एवं लकडी के चौकोर बोर्ड की सहायता से 1 मीटर चौडा एवं 3 मीटर लम्बा (लम्बाई कम्पोस्ट बोर्ड की मात्रा के अनुसार) और करीब 1.5 मीटर ऊँचा चौकार ढेर बना लें। चार पांच घंटे बाद लकडी के बोर्ड को हटा ले एवं ढेर को दो दिन तक ऐसे ही पड़ा रखें। दो दिन बाद ढेर को तोडकर वापस चौकोर ढेर बना लें एवं यह ध्यान रखें कि ढेर का अन्दर का हिस्सा बाहर एवं बाहर का हिस्सा अन्दर आ जाये। इस तरह से ढेर को दो दिन के अन्तराल पर तीसरे दिन पलटाई करते जाये एवं तीसरी पलटाई पर जिप्सम की पूरी मात्रा मिला दें। पानी की मात्रा यदि कम हो तो उस पर पानी छिड़क दें एवं चौकोर ढेर बना लें। पलटाई करने का विवरण निम्न तालिका में दिया गया है।

तालिका : 1 दीर्घ अवधि मे कम्पोस्ट की पलटाई का विवरण

दिवस	पलटाई / विवरण
–2, –1 एवं 0 दिन	भूसे को गीला करना, जिप्सम को छोडकर सारी सामग्री मिलाकर पानी छिड़क कर उसका ढेर बना लें। यदि पानी बह कर निकलें तो उस पानी को पुनः कम्पोस्ट में ही उपयोग करें।
तिसरा दिन	**पहली पलटाई :** ढेर को इस तरह से तोडे कि ऊपर का हिस्सा नीचे एवं नीचे का हिस्सा ऊपर हो जाये, इस ढेर पर लिण्डेन छिड़क दे ताकि मक्खियाँ नही बैठें एवं आसपास फार्मलिन 6 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
छटा दिन	**दूसरी पलटाई**: ढेर की दूसरी बार पलटाई करें एवं पूर्व की तरह उस पर लिण्डेन छिड़क दें।
नवाँ दिन	**तीसरी पलटाई :** जिप्सम को मिलाकर पलटाई करें एवं पुनः ढेर बना दें एवं आसपास फार्मलिन 6 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
बाहरवाँ दिन	**चौथी पलटाई :** आसपास फार्मलिन 6 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
पन्द्रहवाँ दिन	**पॉचवी पलटाई :** आसपास फार्मलिन 6 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
अठारवाँ दिन	**छटी पलटाई :** आसपास फार्मलिन 4 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।
ईक्किसवाँ दिन	**सातवीं पलटाई :** आसपास फार्मलिन 4 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। साथ ही कम्पोस्ट को सूंघकर देखें यदि अमोनिया की गन्ध हो तो पलटाई ठीक से करें।
चौबीसवाँ दिन	**आठवीं पलटाई :** इस पलटाई में कम्पोस्ट में अमोनिया की गन्ध बिल्कुल नहीं होनी चाहिए और यदि है तो एक बार और एक दिन बाद पलटाई करें क्योंकि इससे पैदावार घटेगी एवं कोप्राइनस का प्रकोप सर्वाधिक रहेगा। कम्पोस्ट में नमी की मात्रा देखने के लिए उसे मुट्ठी में लेकर दबाएं यदि थोड़ा पानी उंगलियों के बीच नजर आये तो उपयुक्त है। यदि अधिक पानी रह गया है तो कम्पोस्ट को थोड़ा फैला दें जिससे अतिरिक्त नमी उड़ जाये परन्तु इस पर मक्खियां नहीं बैठे
सत्ताईसवाँ दिन	कम्पोस्ट खाद से 1 प्रतिशत बीज मिलाना (स्पानिंग करना)।

पाईप विधि : यह विधि दीर्घ कम्पोस्टिंग में लगने वाले समय को कम करने के लिए है। इस विधि द्वारा 19–20 दिन में कम्पोस्ट तैयार हो जाती है। इसमें कुल 12 पाईप, 4 फिट आकार के जिनमें चारों ओर 1 इंच व्यास के छेद किये जाते है की आवश्यकता होती है। कम्पोस्ट की शुरुआती 3 पलटाई तक विधि लम्बी विधि जैसी है। तीसरी पलटाई के बाद कम्पोस्ट को एक लोहे के फ्रेम के आकार में भरते समय नीचे से एक फिट की ऊँचाई के अन्तराल में एक–एक पाईप लगाते हैं इन्हें एक फ्रेम की सहायता से व्यवस्थित किया जाता है। यदि 2 टन का कम्पोस्ट बनाना है तो पाईप को व्यवस्थित रखने के लिए 4 फ्रेम की आवश्यकता पड़ती है। इस विधि में तीसरी पलटाई के बाद हर पलटाई 4 दिन बाद की जाती है। लगभग 2–3 पलटाई उपरान्त कम्पोस्ट तैयार हो जाता है। यदि अमोनिया की गन्ध हो तो एक पलटाई और की जाती है। इस पूरे कम्पोस्ट को 100 गेज की पॉलीथीन शीट से ढकना आवश्यक है एवं इस शीट में बड़े छेद कर दें ताकि हवा का आवागमन बना रहें। इस विधि से कम्पोस्ट बनाने के लिए आवश्यक सामग्री दीर्घ विधि जैसी ही होती है।

लघु विधि द्वारा कम्पोस्ट खाद तैयार करना : इस विधि से तैयार किया गया कम्पोस्ट दीर्घ विधि से तैयार किये गये कम्पोस्ट से अच्छा होता है इस पर मशरूम की उपज भी ज्यादा मिलती है एवं कम्पोस्ट तैयार करने में समय कम लगता है। परन्तु साथ ही इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने में लागत भी ज्यादा आती है और कुछ यंत्रों की आवश्यकता होती है जैसे कम्पोस्ट शेड, बल्क पाश्चुराइजेशन कमरा या टनल, पीक हीटिंग कमरा इत्यादि।

कम्पोस्ट यार्ड : एक मध्यम आकर के मशरूम फार्म के लिए 100 फीट लम्बाई एवं 40 फीट चौडाई वाला शेड ठीक रहता है कम्पोस्ट यार्ड का फर्श सीमेंट का बना होना चाहिये साथ ही पानी को नीचे इकट्ठा करने का गुड्डीपिट होना चाहिये एवं ऊपर सीमेंट की चादर या टिन शेड लगानी चाहिये।

बल्क पाश्चुराइजेशन कमरा या टनल : इसकी दीवारें इन्सुलेटेड होती है एवं इसमें दो फर्श होते है। पहले फर्श में 2 प्रतिशत का ढलान दिया जाता है। इसके उपर लकडी या लोहे की जाली लगी होती है जिसके ऊपर कम्पोस्ट को रखा जाता है। करीब 25–30 प्रतिशत फर्श को खुला रखा जाता है जिससे भाप व हवा का आवागमन अच्छी तरह से हो पाये। कमरे का आकार कम्पोस्ट की मात्रा पर निर्भर करता है। करीब 20–22 टन कम्पोस्ट बनाने के लिए 36' लम्बाई × 10 फीट चौड़ाई × 9 फीट फर्श की ऊँचाई आकार के इन्सुलेटेड कमरे की आवश्यकता होती है। इसके अलावा हमें 150 किलोग्राम/घंटा की दर से भाप बनाने वाले बॉइलर की आवश्यकता होती है। इसके अलावा 1450 आर.पी.एम. दबाव

100–110 मिली मीटर एवं 150–200 घन मीटर हवा प्रति घंटा प्रति टन ब्लेअर की आवश्यकता होती है। जहाँ पर ढलान दिया जाता है वहाँ पर भाप एवं हवा के पाइप खुलते है जो कि ब्लोअर से जुड़े रहते है। ब्लोअर, प्लेनम के नीचे लगा रहता है एवं भूमिगत कमरे में रहता है। ताजा हवा, डेम्पर्स की सहायता से पुनः सर्कुलेशन डक्ट से कम्पोस्ट की कन्डीशनिंग की जाती है। पाश्चुराइजेशन कक्ष में दो वेन्टीलेटर ओपनिंग होती है एक अमोनिया रिसर्कुलेशन एवं अन्य गैसों के लिए एवं दूसरी ताजा हवा के लिए। टनल के दोनों ओर दरवाजे होते है एक ओर से कम्पोस्ट डाला जाता है और दूसरी ओर से निकाला जाता है।

उच्च तापीय कक्ष : यह सामान्य इन्सुलेटेड कक्ष होता है जिसमें भाप की नलियॉ एवं हवा के आवागमन के लिए पंखा लगा होता है। 24 फिट लम्बाई × 6 फिट चौड़ाई × 8 फिट छत की की ऊँचाई का कमरा 250 ट्रेज को रखने के लिए ठीक रहता है। इस कक्ष का उपयोग केसिंग सामग्री को निर्जीवीकरण के लिए काम में लेते हैं। इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने के लिए गेहूं/चावल का भूसा, मुर्गी की खाद वाला सूत्र काम में लिया जाता है।

प्रथम चरण : दीर्घ अवधि की तरह ही कम्पोस्ट बनाने के लिए भूसे को दो दिन तक गीला किया जाता है एवं तीसरी पलटाई तक वैसे ही पलटाई की जाती है जैसे दीर्घ अवधि में की जाती है। चौकोर ढेर बनाया जाता है एवं मध्य भाग में तापमान 70–80 डिग्री सैल्शियस तक हो जाता है एवं बाहरी हिस्से में तापमान 50–60 डिग्री सैल्शियस होता है।

द्वितीय चरण : द्वितीय चरण में कम्पोस्ट को टनल में डाल दिया जाता है एवं तापमान स्वतः ही (6–8 घंटे में 57 डिग्री सैल्शियस हो जाता है। धीरे–धीरे इनका तापमान 50 सें 45 डिग्री सैल्शियस तक घटाकर ताजा हवा अन्दर डालकर एवं एक्जास्ट से गर्म हवा को बाहर निकालकर किया जाता है।

तृतीय चरण : बहुत सारे तापमापी अलग–अलग जगह पर टनल में लगा दिये जाते है। जिससे कि टनल के अन्दर का तापमान देखा जा सके। एक तापमापी को प्लेनम में रखा जाता है एवं 2–3 तापमापी को कम्पोस्ट ढेर में रखा जाता है। दो तापमापियों को कम्पोस्ट ढेर के ऊपर रखा जाता है। दरवाजे को बन्द करके, ब्लोअर के पंखे को चालू करने से कम्पोस्ट का तापमान 45 डिग्री सैल्शियस आ जाता है । यह ध्यान में रखना चाहिये कि टनल के अन्दर ही हवा के तापमान का अन्तर 3 डिग्री सैल्शियस से अधिक न हो। जैसे ही कम्पोस्ट का तापमान 45 डिग्री सैल्शियस हो, ताजा हवा रोक देनी चाहिये। धीरे–धीरे स्वतः ही तापमान 1.2 डिग्री सैल्शियस प्रति घंटा की दर से बढ़ने लगता है एवं 57 डिग्री सैल्शियस (10–12 घंटे में) तापमान मिल जाता है। इस तापमान पर कम्पोस्ट को 6 से 8 घंटे रखा जाता है ताकि उसका पास्चुरीकरण अच्छी तरह से हो सके। ताजा हवा के प्रवाह के लिए डक्ट को खोल देते है (लगभग 10 प्रतिशत) इस प्रकार कम्पोस्ट के पास्चुरीकरण के बाद उसकी कन्डीशनिंग की जाती है।

कम्पोस्ट की कन्डीशनिंग : उपरोक्त पास्चुरीकृत कम्पोस्ट में कुछ ताजा हवा देने से एवं भाप की सप्लाई बन्द करके उसका तापमान 45 डिग्री सैल्शियस तक लाया जाता है इस तापमान पर आने में लगभग तीन दिन का समय लगता है एवं अमोनिया की मात्रा 10 पी.पी.एम. से कम हो जाती है। इस कन्डीशनिंग के बाद कम्पोस्ट को 25 डिग्री सैल्शियस से 28 डिग्री सैल्शियस तक ठंडा किया जाता है। और इसके लिए ताजा हवा के प्रवाह का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार इस पूरी प्रक्रिया में 7–8 दिन लगते है पास्चुरीकरण एंव कन्डीशनिंग के समय 25–30 प्रतिशत कम्पोस्ट का वजन कम हो जाता है यदि हम 20 टन कम्पोस्ट बनाना चाहते है तो हमें लगभग 28 टन कम्पोस्ट टनल में भरना चाहिये। जिसके लिये 12 टन कच्चे माल की आवश्यकता होगी। यानि कुल कच्चे माल का 2 से 2.5 गुना कम्पोस्ट अन्त में प्राप्त होता है।

अच्छे कम्पोस्ट की पहचान : कम्पोस्ट बनने के बाद हमें कुछ बातें ध्यान में रखनी चाहिये जैसे कि कम्पोस्ट का रंग गहरा भूरा होना चाहिये, यह हाथ पर चिपकना नहीं चाहिये, इसमें से अच्छी खुशबु आती हो, अमोनिया की गन्ध नही हो, नमी की मात्रा 68–72 प्रतिशत एवं पी.एच. 7.2–7.8 होना चाहिये। यह भी ध्यान रखना चाहिये की उसमें किसी प्रकार के कीड़े, नीमेटोड एवं दूसरी फफूँद न हों। यह पहचान लम्बी विधि द्वारा बनाये बीजाई कम्पोस्ट पर भी लागू होती है।

बीजाई (स्पानिंग) : मशरूम का बीज ताजा, पूरी बढ़वार लिए एवं अन्य फफूंद से मुक्त होना चाहिये। कई लोग 1.5 किलो बीज भी उपयोग में लेते हैं। परन्तु यह कम्पोस्ट का तापमान बढ़ा देता है। बीज की मात्रा 1 क्विंटल कम्पोस्ट में 750 ग्राम से 1 किलोग्राम के आसपास होनी चाहिये। इस बीज/स्पॉन को कम्पोस्ट में अच्छी तरह मिलाकर उसे या तो पॉलीथिन की थैलियों (12 इंच) या पॉलीथिन शीट (6–8 इंच तक) पर शेल्फ में भर देना चाहिये। पॉलीथिन की थैलियों को ऊपर से मोडकर बन्द कर देना चाहिये जबकि शेल्फ पर अखबार ढक देना चाहिये। थैलियां 8 किलो कम्पोस्ट भरने के लिए उपयुक्त हो, इससे उत्पादन 10 किलो कम्पोस्ट के बराबर मिलता है। इस समय कमरे का तापमान 25 डिग्री सैल्शियस से कम एवं नमी 70 प्रतिशत रखनी चाहिये। करीब 15 दिन बाद उसके अन्दर स्पॉन रन पूरा हो जाता है और इसके बाद कैसिंग की आवश्यकता होती है।

कैसिंग : जैसे ही स्पॉन रन पूरा हो जाता है उसके बाद कैसिंग मिट्टी के लिए उपयुक्त मिश्रण इस प्रकार है।

1. बगीचे की खाद (एफ.वाई.एम.) + दोमट मिट्टी – 1 :1

2. एफ.वाई.एम + दो साल पुरानी बटन मशरूम की खाद– 1 :1

3. एफ.वाई.एम + दोमट मिट्टी + रेती + 2 साल पुरानी बटन मशरूम की खाद– 1 :1 :1 :1

उपरोक्त किसी भी एक मिश्रण को लेवे (परन्तु मिश्रण–2 सर्वाधिक उपयुक्त एवं अधिक उपज देने वाला है।) एवं 8 घंटे तक पानी में भिगोना चाहिये। करीब 8 घंटे के बाद पानी से निकालकर सुखा कर कैसिंग मिट्टी का निर्जीवीकरण, फॉर्मलिन के 6 प्रतिशत घोल से करना चाहिये एवं उसे 48 घंटे तक बंद रखना चाहिये। उसके बाद इसे खोलकर 24 घंटे फैलाकर रखें ताकि मिश्रण सूख जाये एवं स्पॉन रन कम्पोस्ट पर 1 इंच मोटी सतह लगानी चाहिये एवं पानी इस तरह छिड़कें कि केवल केसिंग ही गीली हो। कमरे का मापमान 20 डिग्री सैल्शियस से कम होना चाहिये एवं नमी 70–90 प्रतिशत के बीच होनी चाहिये साथ ही स्वच्छ हवा का आवागमन होना चहिये। कैसिंग मिश्रण की पानी को सोखने की क्षमता 75 प्रतिशत के आसपास, पी.एच. 7.7–7.8 कैसिंग मिट्टी का धनत्व 0.75–0.80 ग्राम/मिलीलीटर तथा पोरोसिटी व ई.सी. कम होनी चाहिये।

कैसिंग करने के लगभग 10–12 दिन पश्चात् इसमें छोटे–छोटे मशरूम के अंकुरण बनने शुरू हो जाते है। इस समय से कैसिंग पर 0.3 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराइड का छिड़काव दिन में एक बार पानी के साथ जरूर करना चाहिये और इसकों मशरूम को तोड़ने तक बराबर करते रहना चाहिये। जो अगले 5–7 दिनों में बढ़कर पूरा आकार ले लेते है। इन्हें धुमाकर तोड लेना चाहिये तोडने के बाद नीचे की मिट्टी लगे तने के भाग को चाकू से काटकर अलग कर देना चाहिये एवं आकार के अनुसार उनको छॉट लेना चाहिये तथा एक बार केसिंग लगाने से लेकर करीब 80 दिन तक फसल प्राप्त होती रहती है एवं कुल उपज 1 क्विंटल कम्पोस्ट पर 15–18 किलों के लगभग प्राप्त होती है। जब कम्पोस्ट लघु विधि द्वारा बनाया गया हो तो उपज 20–25 किलोग्राम प्रति क्विंटल तक मिल जाती है।

मशरूम की उपज बढ़ाने के लिए कैसिंग के अन्दर 0.5 प्रतिशत जिप्सम मिलाना चाहिये। इससे पी.एच. मान अनुकुल रहता है। कैसिंग मिट्टी के अन्दर 1 प्रतिशत स्पॉन मिलाना चाहिये, यदि केसिंग के बाद उपज आने का अन्तराल अधिक हो। कैसिंग स्पॉन रन के 7 दिन बाद और कैसिंग से पहले कम्पोस्ट रन को थोड़ा उपर से तोड़कर फिर से बराबर करके केसिंग करनी चाहिये।

यदि उपज अधिक हो तो मशरूम को डिब्बा बंदी करके लम्बे समय तक रखा जा सकता है। यदि डिब्बाबंदी की सुविधा न हो तो फ्रिज में 7 से 10 दिन तक 5 डिग्री सैल्शियस तापमान पर सुरक्षित रखी जा सकती है। एक किलोग्राम मशरूम उत्पादन की लागत 20–22 रूपये के बीच में आती है एवं बाजार में इसका मूल्य 120–150 रूपये प्रति किलोग्रम तक मिल जाता है।

मूल्य संवर्धन : मशरूम तोड़ने के बाद आकार के अनुसार उसकी ग्रेडिंग करें तथा नीचे का थोड़ा सा हिस्सा जिस पर कम्पोस्ट लगा हो, चाकू से काट कर 3 प्रतिशत केल्शियम क्लोराईड के घोल से धोकर फिर साफ पानी से धोयें। इस भूरे उत्पाद को पुरानी साड़ी या कपड़े पर फैला दें ताकि अतिरिक्त पानी सूख जाये। फिर 250 ग्रम, 500 ग्राम के पैकेट बनाकर सील कर दें एवं थैलियों में थोड़े छेद कर दें और रेफ्रिजरेटर में इसे 7–8 दिन तक रख सकते हैं। ताजा मशरुम बाजार में आसानी से बिक जाती है। मशरुम के अनेक उत्पाद जैसे अचार, चिप्स, बिस्किट्स, सूप पाउडर, बड़ियां एवं नूडल्स आनि बनाकर बेचा जा सकता है।

किसान कॉल सेन्टर
हेल्पलाईन 0744–2662700
कृषि प्रौद्योगिकी प्रबंधन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र
(राष्ट्रीय कृषि विकास परियोजना)
प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

मृदा स्वास्थ्य कार्ड आधुनिक खेती की आवश्यकता

राजेंद्र कुमार यादव, विनोद कुमार यादव, एस.एन. मीना एवं सुभाष असवाल

कृषि अनुसंधान केंद्र उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि महाविद्यालय, हिण्डौली

देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती हैं इनमें से 58 प्रतिशत लोग अपनी आजीविका के लिए पूरी तरह से कृषि पर निर्भर है। किसान की आर्थिक, सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन की रीढ़ मृदा, जल और हवा है। भूमि किसानों के लिए अनाज रूपी सोना उगलती है। हमारा पहला कर्तव्य है कि हमें धरती माँ के सील की रक्षा करनी चाहिए। देश की तीव्र गती से बढ़ती आबादी, शहरीकरण और औद्योगिकरण के भूमि अधिग्रहण के चलते उपजाऊ कृषि भूमि का विस्तार तो संभव नही है, इसलिए प्रति इकाई क्षेत्र से प्रति इकाई समय में फसल उत्पादन के लागत साधनों जैसे बीज, उर्वरक, सिचांई जल, शाकनाशी, कीटनाशी एवं कवकनाशी का सफलतम उपयोग करना होगा, जिसके लिए बुवाई पूर्व मृदा परिक्षण कराकर उसके गुणों के आधार पर फसलोंत्पादन करना होगा। अगर हम मृदा के ही दृष्टिकोण से देखे तो उसका दोहन निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है। भरतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के सुधार और संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया जिससे कृषि उत्पादकता तथा लाभदायकता को बढ़ाया जा सके, इस कम में मृदा परिक्षण नामक एक मोबाइल मिनी प्रयोगशाला विकसित की गई, जो मृदा स्वास्थ्य का आकलन करने में सक्षम है तथा इसका इस्तेमाल मृदा स्वास्थ्य कार्ड बनाने में किया जा सकता है।

सभी किसानो के लिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड नामक नई स्कीम का 19 फरवरी 2015 को प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा बीकानेर के निकट श्रीगंगानगर के सूरतगढ़ (राजस्थान) से मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना का शुभारंभ किया गया। इस महत्वपूर्ण योजना का उद्देश्य देश भर में कृषि क्षेत्र में मिट्टी की सेहत पर ध्यान देकर मिट्टी को आवश्यक पौषक तत्व उपलब्ध कराना है ताकि कृषि उत्पादकता में अभिवृद्धि की जा सके। मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के शुभारंभ के अवसर पर 'स्वस्थ धरा, खेत हरा' का नारा दिया गया। मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना के तहत देश के प्रत्येक किसान को कृषि भूमि की मिट्टी की जांच हेतु कार्ड उपलब्ध कराए जा रहे है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड न सिर्फ मिट्टी की उत्पादकता से जुड़ी जानकारियां देते है बल्कि यह भूमि में उर्वरक के समुचित उपयोग संबंधी सलाह भी उपलब्ध कराते है। उल्लेखनिय है कि देश के अधिकांश क्षेत्रों में मृदा स्वास्थ्य और उर्वरको के संबंध में पर्याप्त जानकारी के अभाव में किसान अक्सर नत्रजन का अधिक प्रयोग करते है जो न सिर्फ कृषि उत्पादन एवं उत्पादों की गुणवत्ता के लिए खतरनाक है बल्कि इससे भूमिगत जल में नाइट्रेट की मात्रा बढ़ने से कई पर्यावरणीय समस्याएं भी उत्पन्न होती है, अत: किसानों को उनकी भूमि की मृदा की मृदा स्वास्थ्य और उसके पोशण हेतु उर्वरको के अनुकूलतम उपयोग के संदर्भ में जानकारी आवश्यक है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड क्यों जरूरी है?

सामान्यत: कृषक अधिक अनाज प्राप्त करना चहते है, आत्म निर्भर रहना चाहते है, अधिकत्तर कृषकों की आजीविका खेती पर ही निर्भर है। अधिक अन्न प्राप्त करने के लिए मृदा की उर्वरकता शक्ति का संन्तुलन होना आवश्यक है। उर्वरता की संतुलता बनाये रखने के लिए पोषक तत्वों का संन्तुलन होना आवश्यक है। मृदा की जाँचोपरान्त पोषक तत्वों का अंकन निम्न, मध्यम, उच्च श्रेणी के रूप में मृदा स्वास्थ्य कार्ड में किया जाता है। पोषक तत्वों की पूर्ति की गणना कर उर्वरक की मात्रा कि.ग्रा./क्विंटल में आकलन प्रति नाली/प्रति हैक्टर दी जाने हेतु मृदा स्वास्थ्य कार्ड में लिखा जाता है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अन्तर्गत सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे कि, तांबा, गंधक, मेगनीज, मेंग्नीशियम, बोरोन, आदि का अंकन भी मृदा स्वास्थ्य कार्ड में किया जाता है। अत: किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड निर्गत करना अत्यंत आवश्यक है।

मृदा संरक्षण एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड

मृदा के सम्बंध में मृदा उर्वरक एवं उत्पादकता बढ़ाने में सोयल मृदा स्वास्थ्य कार्ड की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मृदा को उपजाऊ बनाने के लिए इस समय देश के कई राज्यों में पहचानों अभियान चलाया जा रहा है जो खेती की लागत कम करने और मृदा को उपजाऊ बनाए रखने के लिहाज से यह अभियान महत्वपूर्ण है। आने वाले समय में खद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिए उत्पादन लागत सिंचाई जल, कीटनाशी इत्यादी के बेहतर उपयोग को सुनिश्चित करते हुए मृदा उत्पादकता एवं उर्वरकता को बनाये रखना नितान्त आवश्यक है।

मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रपत्र

मृदा परीक्षण/मृदा विश्लेषण

मृदा स्वास्थ एवं गुणवत्ता को बनाये रखने के लिए मानव के स्वास्थ की भांति ही मृदा का परीक्षण करना आवश्यक होता हैं तथा परीक्षण के परिणाम के आधार पर मृदा में आये विकारों का निदान किया जा सकता है। मृदा विश्लेषण में फसल वृद्धि को सहायक करने वाले आवश्यक पादप पोषक तत्वों के आधार पर मृदा की उर्वरता का निर्धारण करने का एक उपयोगी साधान है। मृदा विश्लेषण में विभिन्न निष्कर्षी घोलों का प्रयोग कर मृदा में पोषक तत्वों की स्थिति का निष्कर्षक किया जाता है।

मृदा परिक्षण के उद्देश्य

- मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उर्वरता का मूल्यांकन/जानकारी प्राप्त की जा सकती है।
- फसलों के लिए उर्वरकों की पूर्ति करने के लिए मृदा परिक्षण किया जाता है।
- समस्याग्रस्त मृदायें जैसे (अम्लीय, क्षारीय आदि को सुधारने के लिए एवं मृदा प्रदूषण के आंकलन के लिए।

मृदा परीक्षण के लिए मृदा नमुने लेने की विधि

सर्वप्रथम सम्पूर्ण खेत का सर्वेक्षण करके उसे विभिन्न भागों में बाँट ले।प्रत्येक भाग में 8–10 निशान लगा ले।मृदा सतह से नमूना लेने के लिए खूर्पी या बर्मे की सहायता से अंग्रेजी के वी आकार का गड्डा 6 इंच तक बनायें तथा किनारे से एक इंच मोटी परत लें।इस प्रकार विभिन्न स्थानो से ली गई मृदा को किसी साफ कपड़े, कागज, पॉलीथीन के ऊपर ढेर बनाकर अच्छी तरह मिलाने के बाद पूरे ढेर में से लगभग आधा किलोग्राम मृदा लेकर एक साफ थैली में डालकर किसी नजदीकी मृदा प्रयोगशाला में भेज देना चाहीये।

मृदा नमुना प्राप्त कर परिक्षण के लिए तैयार करना

- मृदा नमूना मृदा परिक्षण के उद्देश्य पर आाधारित प्रक्रिया होता है, जैसे : मृदा उर्वरता व सुधार के लिए उद्यान के लिए।
- मृदा उर्वरता की दृष्टि से मृदा की ऊपरी सतह से 0–15 से.मी. गहराई तक वी आकार का गड्डा बनाकर दोनों तरफ से स्लाइस काट कर मृदा का नमूना लेना चाहिए।
- एक खेत में 10 मीटर की दूरी पर नमूने लेकर एवं एक साफ कपड़े में एकत्रित कर 4 भागों में बाट लिया जाता है। अब दो आमने–सामने वाले भगों को मिलाकर पुनः मृदा एकत्रित कर यही प्रक्रिया दोहराई जाती है।जब तक की मृदा नमूना का वजन 500 ग्राम न हो जाये।
- नमूने को सूखाना, छानना,पीसना, मिलाना, संग्रहण या थैली में भरना, टैगिंग या सूचना पट्टिका लगाना।
- नमूना प्रप्त करने के लिए टूल्स/सामग्री जैसे मृदा औजार या ट्यूब आगर, बेलचा या खुरफी व ट्रे–पेपर एवं कपड़े के टैग।
- नमूना छायादार पेड़ के नीचे जमा खाद के स्थान से गीले स्थान से नमूना नही लेना चाहिए।
- नमूने को सूखाकर तैयार किया जाता है।

मृदा नमुना लेते समय सावधानियाँ

- जिन स्थानों की मृदा अम्लीय, लवणीय एवं क्षारीय हो वहाँ विभिन्न गहराईयों में नमूने लिये जाने चाहिए।
- मृदा नमूना कम्पोस्ट आदि के ढेर गहरी मृदा या सिंचाई नाली के पास का नही होना चाहिए।
- नमूना लेने वाले खेत पर ताजी खाद, चूना या कोई मृदा सुधारक रसायन तत्काल में नही डाला गया हों।
- फसल की परिपक्वता की स्थिति तक नमूना न लें, अगर जरूरी हो तो पौधों की कतारों के बीच वाले स्थान से नमूना ले।

मृदा नमूना की गहराई

- मृदा उर्वरता के लिए 0–15 से.मी. गहराई तक।
- अम्लीय एवं क्षारीय मृदा सुधार के लिए 0–90 से.मी. गहराई तक।
- बागवानी के लिए 100 से.मी. तक की गहराई के गड्ढे की परतों के रूप में मृदा एकत्रित करें।

मृदा परिक्षण के लिए आवश्यक यंत्र एवं उपकरण

1. **पी. एच मीटर:** इसके द्वारा मृदा में अम्लीयता एवं क्षारीयता का निर्धारण किया जाता है।
2. **विधुत चालकता मीटर:** इसके द्वारा मृदा में कुल घुलनशील लवणों का निर्धारण किया जाता है।
3. **वर्ण मापक :** मृदा रंग की निर्धारण किया जाता है।
4. **स्पेक्ट्रो–फोटोमीटर:** इसके द्वारा मृदा तथा पौधों में नत्रजन, फॉस्फोरस एवं सल्फर की मात्रा का निर्धारण किया जाता है।
5. **फ्लेम–फोटोमीटर:** इसके द्वारा पोटेशियम, सोडियम, कैल्शियम एवं एल. आई का निर्धारण किया जाता है।
6. **ए.ए.एस (Atomic Absorption Spectophotometer):** इस उपकरण के द्वारा पोषक तत्वों का निर्धारण किया जाता है।

मृदा नमूना परिक्षण की विधियाँ

- मृदा परिक्षण किट द्वारा
- स्थिर प्रयोगशाला द्वारा
- मोबाइल मृदा प्रयोगशाला द्वारा

मृदा परीक्षण (मिट्टी जाँच के लाभ)

- मिट्टी की जाँच रिपोर्ट नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम और सूक्ष्म पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए उचित उर्वरकों के इस्तेमाल के लिए सिफारिश करने में मदद कर सकती है ।
- मिट्टी की जाँच के माध्यम से फसल की सूक्ष्म पोषक आवश्यकताओं का निर्धारण किया जा सकता है यह एक उपयोगी पोषक तत्वों के समुचित प्रबंधन में सहायक है ।
- उर्वरकों की सटीक मात्रा को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की विषाक्तता को नियंत्रित किया जा सकता है ।
- मिट्टी की जाँच रिपोर्ट के माध्यम से फसलों के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता को वैज्ञानिक रूप से किया जा सकेगा ।

रबी की फसलों की पाले से सुरक्षा कैसे करें

वर्षा गुप्ता, खजान सिंह, राजेश कुमार एवं मंजू मीणा
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

रबी अर्थात् सर्दी के मौसम में जब तापमान जमाव बिंदु या इससे कम हो जाता है तब हवा में उपस्थित नमी व ओस की बूंदे छोटे–छोटे बर्फ के कणों में बदल जाती है तथा यह कण पौधों पर जम जाते है। ऐसी स्थिति को पाला कहते है। सर्दी के मौसम में जिस दिन दोपहर से पहले ठंडी हवा चलती रहे एवं हवा का तापमान जमाव बिंदु से नीचे गिर जाये तथा दोपहर बाद अचानक हवा चलना बंद हो जाये और आसमान साफ रहे या उस दिन आधी रात के बाद से ही हवा रूक जाये, तब पाला पड़ने की संभावना अधिक हो जाती है। विशेष रूप से रात को तीसरे एवं चौथे पहर में पाला पड़ने की संभावना अधिक रहती है। आमतौर पर पाला दिसम्बर से जनवरी तक ही रहता है, परंतु कुछ वातावरणीय कारणों से इसकी अवधि पूरे दिसम्बर से जनवरी माह के अन्त तक भी हो सकती है। मैदानी क्षेत्रों में जहां उष्ण कटिबंधीय फसलें उगाई जाती है, वहां फसलों की गुणवत्ता तथा उत्पादन में पाले एवं सर्दी का प्रभाव पाया गया है। रबी में उगाई जाने वाली अधिकांश फसलें सर्दियों में पड़ने वाले पाले एवं सर्दी से प्रभावित होती है। सब्जी और फल इस पाले के प्रति संवेदनशील होते है, जबकि खाद्यान्न फसलें अपेक्षाकृत कम प्रभावित होती है। पाला पड़ने से फसलों को आंशिक या पूर्ण रूप से हानि पहुंचती है जबकि अत्यधिक पाले से फसलों को शत प्रतिशत नुकसान हो सकता है। टमाटर, मिर्च, बैंगन आदि सब्जियों, पपीता एवं केले के पौधों तथा मटर, चना, अलसी, सरसों, जीरा, धनिया, सौंफ, अफीम आदि फसलों में सबसे ज्यादा 80 से 90 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है। अरहर में 70 प्रतिशत, गन्ने में 50 प्रतिशत एवं गेहूं तथा जौ में 10 से 20 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता है।

पौधों व फसलों पर पाले का प्रभाव

- पौधे व फसल पर पाले के प्रभाव से पत्तियॉ, कोपलें, फल, फूल तथा पौधे के सभी भाग नष्ट होने लग जाते हैं। प्रभावित फसल का हरा रंग समाप्त हो जाता है तथा पत्तियों का रंग मिट्टी के रंग जैसा दिखाई देने लगता है। पौधों की पत्तियाँ एवं फूल झुलसने लगते हैं और झुर्रियां पड़ जाती है। फसलों की फलियॉ एवं बालियों में बन रहे दाने सिकुड जाते है या बनते नहीं है। फल के ऊपर धब्बे पड़ जाते हैं व स्वाद भी खराब हो जाता है। अधिकतर पौधों के फूलों के गिरने से पैदावार में कमी हो जाती है।
- पाले के कारण पौधों के पत्ते सड़ने से जीवाणु जनित बीमारियों का प्रकोप अधिक बढ़ जाता है। पाले से प्रभावित फसल, फल व सब्जियों में कीटों का प्रकोप भी बढ़ जाता है।
- फलदार पौधे पपीता, आम आदि में इसका प्रभाव अधिक पाया गया है। शीत ऋतु वाले पौधे 2 डिग्री सेल्सियस तक का तापमान सहने में सक्षम होते है। इससे कम तापमान होने पर पौधे की बाहर व अन्दर की कोशिकाओं में बर्फ जम जाती है।
- गन्ने की फसल पर पाला पड़ने पर तने में उपस्थित शर्करा तेज धूप पड़ने पर एल्कोहल के रूप में बदलने लगती है। जिससे पानी से प्रभावित गूदे में शराब की तरह बदबू आने लगती है और पाले से प्रभावित गन्ने से अच्छा गुड़ व चीनी नहीं बन पाती।

पौधों व फसलों की पाले से सुरक्षा

1 धुआँ करके: जिस रात पाला पड़ने की संभावना हो उस रात 12:00 से 2:00 बजे के आस–पास खेत की उत्तरी पश्चिमी दिशा से आने वाली ठंडी हवा की दिशा में खेतों के किनारे पर बोई हुई फसल के आसपास, मेड़ों पर रात्रि में कूड़ा–कचरा या अन्य व्यर्थ घास–फूस जलाकर धुआं करना चाहिए, ताकि खेत में धुआं हो जाए एवं वातावरण में गर्मी आ जाए। धुआं करने के लिए उपरोक्त पदार्थो के साथ क्रूड ऑयल का प्रयोग भी कर सकते हैं। ऐसा करके 4 डिग्री सेल्सियस तक तापमान आसानी से बढ़ाया जा सकता है।

2 सिंचाई करके: सिंचाई करने से खेत की मिट्टी का तापमान अधिक नहीं गिर पाता इसलिए पौधों की जड़ों पर सर्दी का बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। जब पाला पड़ने की संभावना हो तब खेत में सिंचाई जरूर करनी चाहिए। नमी युक्त जमीन में काफी देर तक गर्मी रहती है तथा भूमि का तापमान कम नहीं होता है। इस प्रकार पर्याप्त नमी नहीं होने पर शीतलहर व पाले से नुकसान की संभावना कम रहती है। सर्दी में फसल में सिंचाई करने से 0.5 डिग्री से 2 डिग्री सेल्सियस तापमान बढ़ जाता है। कम ऊँचाई वाली फसलों में फव्वारा सिंचाई सर्वाधिक अनुकूल, आसान तथा प्रभावी तरीका है।

3 वायु अवरोधक लगाके: दीर्घकालीन उपाय के रूप में फसलों को बचाने के लिए खेत की उत्तरी–पश्चिमी मेड़ों पर तथा बीच–बीच में उचित स्थानों पर वायु अवरोधक पेड़ जैसे शहतूत, शीशम, बबूल, खेजड़ी, एवं जामुन आदि लगा दिए जाए, तो पाले और ठंडी हवाओं से फसल का बचाव हो सकता है।

4 टाटियाँ बांधकर छाया करके: यह तरीका केवल छोटे फलों के पौधों एवं नर्सरी की सीमित क्यारियों के लिए ही प्रभावी हो सकता है। इसमें छाया करने के लिए घास–फूस, गन्ने की पत्तियाँ अथवा पॉलीथिन की चादरों का प्रयोग पाले से बचाने के लिए कर सकते हैं। वायुरोधी टाटियाँ हवा आने वाली दिशा की तरफ यानि उत्तर–पश्चिम की ओर बांधकर क्यारियों के किनारों पर लगानी चाहिए तथा दिन में पुनः हटा देनी चाहिए।

5 रसायनों का प्रयोग करके

- **गंधक का तेजाब :** जिन दिनों पाला पड़ने की संभावना हो उन दिनों फसलों पर गंधक के तेजाब के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। इस हेतु 1 लीटर गंधक के तेजाब को 1000 लीटर पानी में घोलकर एक हेक्टर क्षेत्र में प्लास्टिक के स्प्रेयर से छिड़काव का असर 2 सप्ताह तक रहता है। यदि इस अवधि के बाद भी शीत लहर पाले की संभावना बनी रहे तो गंधक के तेजाब के छिड़काव को 15–15 दिन के अंतराल पर दोहराते रहना चाहिए। सरसों, गेहू, चावल, आलू, मटर जैसी फसलों को पाले से बचाने में गंधक के तेजाब का छिड़काव करने से न केवल पाले से बचाव होता है बल्कि पौधों में लौह तत्व एवं रासायनिक सक्रियता बढ़ जाती है, जो पौधों में रोगरोधिता बढ़ाने में एवं फसल को जल्दी पकाने में सहायक होती है। इसके छिड़काव में सबसे अधिक ध्यान देने योग्य बात यह है कि गंधक के तेजाब का घोल पौधों के ऊपरी हिस्सों से नीचे तक सभी पत्तियों पर अच्छी तरह से लग जाना चाहिए। गंधक के तेजाब का घोल बनाते समय बहुत सावधानी एवं सतर्कता बरतनी चाहिए क्योंकि इससे पौधों के झुलसने का खतरा रहता है। ध्यान रहे कि आवश्यक तेजाब पानी में धीरे–धीरे मिलायें। घोल की सान्द्रता 0.1 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए अन्यथा फसलों पर इसका कुप्रभाव पड़ता है।

- **ग्लूकोज :** ग्लूकोज से कोशिकाओं में घुलनशील पदार्थो की मात्रा बढ़ जाती है। जिससे पाला पड़ने पर कोशिकाओं का पानी बाहर अधिक नहीं निकलता है और कोशिकाओं के आकार सुरक्षित बने रहते हैं। एक किलोग्राम ग्लूकोज को 1000 लीटर पानी में घोल कर फूल आते समय छिड़काव करना चाहिए और इसे 10–15 दिन बाद फिर दोहराया जाये तो पाले से सुरक्षा के साथ–साथ उपज भी बढ़ती है।

- **यूरिया :** यूरिया के छिड़काव से कोशिकाओं में पानी आने–जाने की क्षमता बढ़ जाती है। अतः यदि पाला हल्का होता है तो यूरिया का छिड़काव पाले के नुकसान को कम कर देता है लेकिन यूरिया छिड़कने के बाद पाला अधिक पड़े तो यूरिया कोशिकाओं के अन्दर के पानी को जमाने में मदद कर सकता है। जिससे जीवद्रव्य शीघ्र मरता है और लाभ के बजाय हानि हो सकती है।

- **डी.एम.एस.ओ. (डाई–मिथाइल, सल्फो ऑक्साइड) :** यह पौधों की कोशिकाओं से पानी आर–पार आने–जाने की क्षमता बढ़ाता है, प्रोटीन को विकृत होने से बचाता है। फसल में 50 प्रतिशत फूल आने पर 78 ग्राम डी.एम.एस.ओ. को 750 से 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए और 10–15 दिन बाद इस छिड़काव को पुनः दोहराना चाहिए। इससे चना, अफीम, सरसों, आलू आदि फसलों की पाले से सुरक्षा हो जाती है व उपज भी बढ़ती है।

- **पानी का छिड़काव करके :** जब कभी रात में पाला पड़े तो सवेरे ताजा एवं गुनगुने पानी का छिड़काव कर देने से फसलों पर पाले का प्रभाव कम पड़ता है।

6) अन्य : फसलों को पाले से बचाने के लिए एक रस्सी की सहायता से सुबह सूर्य निकलने से पहले एक मेड़ से दूसरी मेड़ की ओर रस्सी को घुमाते हुए फसलों को हिलाकर जमे हुए पानी को नीचे जमीन पर गिरा देना चाहिए। इससे फसलों को नुकसान से बचाया जा सकता है।

इन सभी विधियों व उपलब्ध साधनों का समुचित उपयोग कर किसान अपनी फसलों की समय रहते पाले के कारण उत्पादन में होने वाली कमी से सुरक्षा कर सकते हैं।

''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	**जून**	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	**सितम्बर**	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, उन्नत कृषि उपकरण
3	**दिसम्बर**	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	**मार्च**	जायद खेती, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

भारत में एग्रो-टूरिज्म की भूमिका

राजेश कुमार, वर्षा गुप्ता, खजान सिंह एवं के. सी. मीना
यांत्रिक कृषि फार्म, उम्मेदगंज, कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, अंता–बारां

एग्री–टूरिज्म पर्यटन शब्द का नया रूप है। यह खेती–किसानी एवं फार्म आधारित व्यवसाय है। जिसे छोटे स्तर पर किसान द्वारा पर्यटकों को भ्रमण कराकर व्यवसाय प्रारम्भ कर आय में इजाफा कर सकता है। किसान अपने कौशल का सही सदुपयोग कर पर्यटकों को आकर्षित कर सकता है। एग्री–टूरिज्म एवं इको–ट्यूरिज्म एक दूसरे से जुड़े हुये है। इको–ट्यूरिज्म में पर्यटकों का भ्रमण किसी कम्पनी के माध्यम से करवाया जाता है जबकि एग्री–टूरिज्म में पर्यटकों का भ्रमण प्रगतिशील किसान एवं किसान समूह द्वारा करवाया जाता है। साथ ही एग्री–टूरिज्म से किसानों की एक्सपोजर विजिट करवाकर ज्ञानवर्धन किया जा सकता है। पर्यटक किसानों से जुड़ने के साथ–साथ ग्रामीण परिवेश से सीधे ही रूबरू होने के परिणामस्वरूप एक्सपोजर मिलना सुनिश्चित हो जाता है।

राजस्थान को ऐतिहासिक पर्यटन राज्य भी कहा जाता है क्योंकि राज्य के प्रत्येक जिले में किलें, मन्दिर, अभ्यारण पार्क आदि अवस्थित है। राजस्थान कृषि एवं प्राकृतिक संसाधनों में विविधताओं से परिपूर्ण है। राजस्थान सरकार ने कृषि के समग्र विकास के लिए सर्वप्रथम "मेगा फूड़ पार्क" रूपनगढ़–अजमेर में स्थापित करके किसानों को आर्थिक मजबूती प्रदान करने के साथ एग्री–टूरिज्म को मुख्य धारा से जोड़नें की पहल शुरू की है। राजस्थान के अन्य जिलों में भी "मेगा फूड़ पार्क" स्थापित किये जा रहे है।

परिचय: भारत में कृषि पर्यटन (एग्री–टूरिज्म) की अपार संभावनाएँ है। कृषि पर्यटन के जरिये किसान अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकता है। किसान अपने खेत पर समन्वित कृषि प्रणाली के विभिन्न घटकों व प्रदर्शन इकाईयों (जैसे संरक्षित खेती यथा पॉली हाउस, शेड़नेट, लो–टनल, नर्सरी, वर्मीकम्पोस्ट इकाई, मशरूम इकाई, अजोला यूनिट, मॉडल डेयरी इकाई, बकरी व मुर्गीपालन इकाई, जैविक खेती इकाई आदि) को स्थापित करने के साथ–साथ उनको साफ–सुथरा रखकर वहां दो–चार कमरों का निर्माण करें या टेन्ट बनाकर हटस् बनाए। ताकि पर्यटकों को आकर्षित किया जा सकें एवं भ्रमण के दौरान आना–जाना व रात्रि विश्राम के समय असुविधा नहीं रहें। किसानों द्वारा पर्यटन विभाग में अपना पंजीकरण कराकर एग्री–टूरिज्म को व्यवसाय की तरह शुरू किया जा सकता है। इसके उपरान्त भू–रूपान्तरण का कोई अतिरिक्त शुल्क नहीं लगता है।

कृषि पर्यटन केन्द्र की मुख्य आवश्यकताएँ: कृषि पर्यटन केन्द्र की सफलता में पर्यटकों की मेहमाननवाजी एवं आदर सत्कार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। पर्यटकों के आने पर उनका स्वागत सत्कार अवश्य करें।

1. किसान के खेत की लोकेशन एवं सड़क से जुड़ाव: कृषि पर्यटन की सफलता फार्म की सही लोकेशन, स्थान एवं सड़क से जुड़ाव पर निर्भर करती है। इसके लिए सर्वप्रथम किसान को गांव की मुख्य सड़क से जुड़े हुये या किसी ऐतिहासिक/प्राकृतिक स्थान यथा किले, मन्दिर, नदी, अभ्यारण पार्क आदि के पास वाले खेतों का चयन करें। अपने फार्म पर आने जाने के लिए सुगम रास्ते का निर्माण करें जिससे पर्यटकों को आने–जाने में असुविधा नहीं रहें। किसान अपने खेत को स्मार्ट कृषि फार्म की तरह निर्मित करें। ताकि पर्यटकों का आकर्षण बना रहें।

2. अतिथि आवास एवं किचन व्यवस्था: किसान अपने फार्म हाउस पर दो–चार कमरों का निर्माण करें जिनके शौचालयों में साफ–सफाई अच्छी हो या टेन्ट, झोपड़ी आदि बनाकर हटस् बनाए। उनको सुसज्जित करनें के साथ बिजली एवं पानी की सुविधा सुनिश्चित करें ताकि पर्यटक को रात्रि विश्राम के समय असुविधा ना हो। पेयजल की भी पर्याप्त व्यस्था हो। गुणवत्तायुक्त खाना बनाने में विश्वसनीय रसोईया (कुक) की मदद अवश्य लेवें। भोजन के लिए किचन सुव्यवस्थित होने के साथ ग्रामीण व्यंजनों का समावेश अवश्य करें। जैसे किचन में मिट्टी का चूल्हा व मिट्टी के तवे की रोटी, घड़े का पानी, शिकोरे में दूध/चाय/कॉफी आदि का समावेश अवश्य करें ताकि पर्यटकों का आर्कषण बना रहे। जैविक उत्पादों से बने भोजन को शामिल करें। भोजन कक्ष को इस प्रकार डिजाइन करें कि प्राकृतिक हवा का अच्छा आदान–प्रदान हो एवं लकड़ी से बनी टेबल–कुर्सी को भोजनकक्ष में व्यवस्थित करें। आवास के आस–पास विभिन्न सजावटी पौधों द्वारा सौन्दर्यकरण अवश्य करें।

3. आपातकालीन चिकित्सा व्यवस्था: फार्म पर प्राथमिक चिकित्सा सुविधा के लिए डॉक्टर के परामर्श के अनुसार दवा किट अवश्य रखें।

डॉक्टर के सम्पर्क सूत्र एवं उनसे टेलीफोनिक वार्तालाप अवश्य करके रखें। ताकि असुविधा से बचा जा सकें।

4. संचार, टेलीफोन/टी.वी. व्यवस्था: वर्तमान परिदृश्य के अनुसार सूचना प्रौद्योगिकी की संपूर्ण व्यवस्था करें ताकि पर्यटकों को मनोरंजन का विकल्प मिल सकें।

5. झील/स्विमिंग टैंक: आवास के पास स्नान के लिए स्विमिंग पूल, डिग्गी की व्यवस्था करें। व्यवसायिक एवं सजावटी मछली पालन के लिए किसान अपने फार्म हाउस पर फार्म पौंड बनाकर अतिरिक्त आय अर्जित कर सकता है।

6. सुरक्षा: पर्यटकों को किसी भी प्रकार का एहसास नहीं हो पायें कि यह जगह सुरक्षा की दृष्टि से उचित एवं सही नहीं है। अतः न्यूनतम सुविधाओं की सुनिश्चितता के साथ सुरक्षा का भी उचित प्रबंधन करना आवश्यक है। ताकि किसी भी प्रकार की अप्रिय घटना न हो पायें।

कृषि पर्यटन केन्द्र के प्रमुख घटक: किसान अपने फार्म पर निम्नांकित घटकों को शामिल करते हुये केन्द्र को स्थापित कर सकते है।

1. समन्वित कृषि तंत्र (जैसे फसलोत्पादन, फल, फूल व पुष्पोत्पादन इकाईयाँ, पॉली हाउस, शेड़नेट, नर्सरी, वर्मीकम्पोस्ट इकाई, मशरूम इकाई, अजोला यूनिट, मॉडल डेयरी इकाई, कृषि वानिकी इकाई, बकरी व मुर्गीपालन इकाई आदि)
2. जैविक खेती इकाई (ऑर्गेनिक हब)
3. जल संरक्षण एवं सोलर पम्प इकाई
4. फसल एवं कृषि यंत्र संग्राहलय

कृषि पर्यटन के प्रमुख लाभ

1. फार्म पर उपलब्ध स्थानीय स्त्रोतों का न्यायसंगत तरीकों से उपयोग द्वारा आय में वृद्धि।
2. स्वरोजगार में वृद्धि एवं समुदाय की आमदनी में बढ़ोत्तरी होने से शहरों की तरफ आकर्षण एवं पलायन कम होगा।
3. स्थानीय व्यवसाय के लिए वृहद बाजार तैयार होना।
4. स्थानीय हस्तकला के लघु उद्योगों, संस्कृति एवं सभ्यता को बढ़ावा मिलेगा।
5. निवेश द्वारा अन्य लघु उद्योगों एवं व्यवसाय को आकर्षित कर ग्रामीण परिवेश के ढ़ांचों में विकास सुनिश्चित हो जाता है।
6. ग्रामीण धरोहर के संरक्षण के साथ परम्परागत वास्तुकला, कला, हस्तशिल्प एवं कौशल को बढ़ावा।
7. ग्रामीणों को सामाजिक एवं आर्थिक मजबूती मिलेगी।
8. ग्रामीण परिवेश के रहन–सहन स्तर को संबल मिलेगा।
9. समग्र कृषि एवं ग्रामीण विकास को नये आयाम मिलना।

कृषि पर्यटन की प्रमुख चुनौतियों

1. पर्याप्त सिंचाई सुविधा का अभाव
2. जलवायुवीय अवस्थाएं
3. किसानों की वित्तिय समस्या
4. शिक्षा एवं जागरूकता का अभाव
5. टुकड़ों में जमीन
6. सरकार के रूझान का अभाव
7. विपणन कौशलता/अनुकूलन की कमी

निष्कर्ष: कृषि पर्यटन द्वारा किसान अपने स्वविवेक, कौशल, विचार, कला एवं ज्ञान को प्रदर्शित कर खेती–किसानी में नये आयाम स्थापित करने के साथ सतत् आय में बढ़ोत्तरी कर सकता है। साथ ही किसान समुदाय के लिए प्रेरणा स्त्रोत/दर्पण के रूप में सहयोगी बन सकता है। जिससे किसानों की खेती को लाभप्रद बनाया जा सकता है। कृषि पर्यटन द्वारा समग्र कृषि विकास को संबल मिलना सुनिश्चित हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप किसान को आर्थिक व सामाजिक रूप से मजबूत कर मुख्यधारा से जोड़ा जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण मिटाने में उपयोगी : पोषण वाटिका

सुनिता कुमारी, आर. एल. मीना, बी. एल. जाट एवं अक्षय चित्तौड़ा
कृषि विज्ञान केन्द्र, दौसा (राजस्थान) : 303 303

आज के बच्चे ही कल के युवा हैं और देश की प्रगति, सुरक्षा एवं संरक्षण का दायित्व उनके कंधों पर ही होगा। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है की हम हमारे देश की आने वाले भविष्य/समय को कैसे सुरक्षित रखें, क्योंकि आज देश में कुपोषण की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है, वर्ष 2019 ग्लोबल हंगर इंडेक्स के मुताबिक भारत 117 योग्य देशों में से 102 वें स्थान पर है।

राजस्थान राज्य पूरे देश में कुपोषण के मामले में असम एवं बिहार के बाद तीसरे नंबर पर है, 2011 की जनगणना के अनुसार प्रदेश में एक करोड़ से भी ज्यादा बच्चे 0–6 वर्ष की उम्र के हैं। कुपोषण से पीड़ित बच्चों के इलाज के लिए सन 2011 में भारत सरकार ने जिला अस्पताल एवं मेडिकल कॉलेजों में कुपोषण निवारण केंद्र (MTC) स्थापित किए, बाद में इन कुपोषण निवारण केंद्रों को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र स्तर तक ले जाया गया, गांवों के कुपोषित बच्चों को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र तक लाने की जिम्मेदारी आशा सहयोगनी एवं आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को दी गई।

क्या है कुपोषण : कुपोषण एक स्वास्थ्य स्थिति है, जो पोषक तत्वों की कमी के कारण होती है। जब आवश्यक मात्रा में पोषक तत्व हमारे शरीर को नहीं मिलते तो शरीर की वृद्धि ठीक तरह से नहीं हो पाती एवं शरीर का वजन भी कम हो जाता है। कुपोषण से ग्रसित लोगों में विटामिन, मिनरल एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी रह जाती है जिससे बीमारियां भी अधिक एवं बार–बार होती हैं।

कुपोषण के लक्षण : विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं यूनिसेफ के अनुसार कुपोषण के तीन प्रमुख लक्षण है।
अ) नाटापन : इस तरह की कुपोषण से व्यक्ति का कद छोटा रह जाता है।
ब) निर्बलता : इस तरह की कुपोषण से कद के अनुपात में व्यक्ति का वजन काफी कम हो जाता है।
स) कम वजन : इस प्रकार के कुपोषण से व्यक्ति की आयु के अनुपात में उसका वजन कम हो जाता है।

कुपोषण के प्रभाव : लंबे समय तक संतुलित आहार न मिलने के कारण हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है जिसके फलस्वरुप वह कभी भी किसी भी बीमारी का आसानी से शिकार हो सकता है।
कुपोषण का सबसे गंभीर प्रभाव मानव की उत्पादकता पर पड़ता है जिससे मानव उत्पादकता लगभग 10 से 15 प्रतिशत तक कम हो जाती है, जो कि अंततः देश के आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है।

कुपोषण से कैसे बचें : पौष्टिक भोजन स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण आधार है, शरीर की आवश्यक जरूरतों को पूरा करने के लिए भोजन में उचित मात्रा में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन, मिनरल्स एवं सूक्ष्म पोषक तत्व होने चाहिए। पोषक तत्वों की अधिकता एवं कमी दोनों का ही हमारे शरीर पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है, शरीर में सभी आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति के साथ–साथ परिवार को कुपोषण से बचाने का सर्वाधिक सरलतम तरीका है पोषण वाटिका। जिसमें घर की आवश्यकतानुसार फल एवं सब्जियां उगाकर संतुलित भोजन वर्ष भर लिया जा सकता है।

क्या है पोषण वाटिका : पोषण वाटिका, पौष्टिक एवं संतुलित आहार उपलब्ध करवाने का एक साधन है, जिसमें विभिन्न प्रकार की सब्जियों एवं फलों को एक सुनियोजित फसल चक्र एवं सुनियोजित प्रबंधन द्वारा लगाया जा सकता है। पोषण वाटिका में उगाए गए सब्जियों एवं फलों से विभिन्न प्रकार के विटामिन, खनिज लवण आदि प्राप्त होते हैं जो कि शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता बढ़ाते हैं। मौसमी फल एवं सब्जियों में न केवल खनिज तत्व की मात्रा भरपूर होती है बल्कि इनमें मौसम की प्रतिकूलता से लड़ने की क्षमता भी होती है।

पोषण वाटिका का स्वरूप : पोषण वाटिका का स्वरूप व्यक्ति विशेष के जीवन स्तर, रुचि, आवश्यकता एवं स्थान की उपलब्धता पर निर्भर करता है। यहां सब्जियों पर आधारित पोषण वाटिका की एक आदर्श स्वरूप एवं प्रबंधन के बारे में जानकारी दी गई है। पोषण वाटिका घर के आसपास खाली पड़ी जगह, जहां सूर्य की पर्याप्त मात्रा में रोशनी आती हो बनाई जा सकती है, पोषण वाटिका का मुख्य उद्देश्य कुपोषण को मिटाना है अर्थात वर्ष भर विभिन्न प्रकार की ताजी एवं पौष्टिक सब्जियां उपलब्ध हो सके। पोषण वाटिका में फसल चक्र एवं उसका नियोजन बहुत जरूरी है। पोषण वाटिका की रूपरेखा, जगह की उपलब्धता, परिवार में सदस्यों की संख्या, रूचि इत्यादि पर निर्भर करती है। चार पांच सदस्य वाले परिवार के लिए पोषण वाटिका का क्षेत्रफल 6 मीटर x 6 मीटर (36 वर्गमीटर) लिया जा सकता है प्रत्येक मौसम में 10–12 तरह की अलग–अलग पौष्टिक सब्जियां ली जा सकती हैं।

सब्जियों का चयन
1) खरीफ ऋतु की सब्जियां : इनको जून–जुलाई में बोया जाता है इस समय भिंडी, लौकी, करेला तोरई, टिंडा, बैंगन, टमाटर, लोबिया, मिर्ची, ग्वार आदि बोई जा सकती है।
2) रबी ऋतु की सब्जियां : इन्हें सितंबर अक्टूबर में लगाया जाता है इस समय बैंगन, सरसों, प्याज, मटर, मूली, लहसुन, आलू, गोभी, चना पालक, धनिया आदि बोई जा सकती है।
3) ग्रीष्मकालीन सब्जियां : इन्हें फरवरी–मार्च में उगाया जा सकता है इस समय भिंडी, ककड़ी, खीरा, लौकी, खरबूजा, अरबी, लोबिया, आदि बोई जा सकती हैं।

सब्जियों में विद्यमान प्रमुख पोषक तत्व निम्न प्रकार है
1) कार्बोहाइड्रेट : आलू, चुकंदर, अरबी आदि।
2) प्रोटीन : ग्वार, लोबिया, मटर, सेम आदि
3) विटामिन : गाजर, पालक, शलजम, मटर, चौलाई, करेला, पत्ता गोभी, फूलगोभी, मूली की पत्तियां, हरी मिर्च आदि।
4) कैल्शियम : चुकंदर, चौलाई, मेथी, प्याज, कद्दू, टमाटर आदि।
5) लोहा : करेला, पुदीना, चौलाई, पालक, मेथी आदि।
6) फास्फोरस : लहसुन, मटर, करेला आदि।
7) पोटेशियम : शकरकंद, आलू, करेला आदि।

तालिका 1 : ऋतुवार पोषण वाटिका की फसल पद्धती

क्यारी सं.	खरीफ	रबी	ग्रीष्मकालीन
1.	टमाटर	फूलगोभी	बैंगन
2.	बैंगन	पत्तागोभी	टमाटर
3.	भिण्डी	गाजर	कद्दूवर्गीय सब्जी
4.	मिर्च	गाजर/मूली	कद्दूवर्गीय सब्जी
5.	कद्दूवर्गीय सब्जी	मटर	भिण्डी
6.	फूलगोफी अगेती	टमाटर	प्याज
7.	चवला	पालक	मिर्च
8.	पत्तेदार सब्जियां	प्याज	चवला
9.	कद्दूवर्गीय सब्जियां	मटर	भिण्डी

तालिका 2 : सब्जियों की कार्यमाला

फसल	बुवाई का समय	बीज दर प्रति वर्ग मीटर (ग्राम.मे)	बुवाई की विधि	कटाई का समय	संभावित उपज प्रति वर्ग मीटर (किलोग्राम)
टमाटर	**जून–जुलाई–अक्टूबर–जनवरी**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात्	सितम्बर–दिसम्बर–जनवरी–अप्रैल	15.20
बैंगन	**जून–जुलाई–अक्टूबर–जनवरी**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात्	सितम्बर–दिसम्बर–जनवरी–मई	20.30
मिर्च	**मई–जून–अक्टूबर–जनवरी**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात्	सितम्बर–नवंबर–जनवरी–अप्रैल	10.15
भिंडी	**फरवरी–मार्च–जून–जुलाई**	2.0	सीधे बीज लगाए	अप्रैल–जून–अगस्त–नवंबर	15.20
लौकी	**फरवरी–मार्च–जून–जुलाई**	0.05	सीधे बीज लगाए	अप्रैल–जून–अगस्त–नवंबर	30.40
करेला	**फरवरी–मार्च–जून–जुलाई**	0.05	सीधे बीज लगाए	अप्रैल–जुलाई–अगस्त–नवंबर	20.30
टिंडा	**फरवरी–मार्च–जून–जुलाई**	0.05	सीधे बीज लगाए	अप्रैल–जून–अगस्त–नवंबर	15.20
तोरइ	**फरवरी–मार्च–जून–जुलाई**	0.05	सीधे बीज लगाए	अक्टूबर–फरवरी	15.20
पालक	**अगस्त – नवंबर**	2.5	सीधे बीज लगाए	अक्टूबर–फरवरी	15.20
मेथी	**सितम्बर – नवंबर**	2.0	सीधे बीज लगाए	नवंबर–मार्च	15.20
गाजर	**सितम्बर – नवंबर**	0.5	सीधे बीज लगाए	सितम्बर–नवंबर–फरवरी–अप्रैल	30.40
मूली	**अगस्त–अक्टूबर–जनवरी–मार्च**	1.0	सीधे बीज लगाए	दिसम्बर – मार्च	20.30
चुकंदर	**अक्टूबर – नवंबर**	0.8	सीधे बीज लगाए	नवंबर – फरवरी	20.25
मटर	**सितम्बर – नवंबर**	10	सीधे बीज लगाए	दिसम्बर – मार्च	6.10
पत्ता गोभी	**सितम्बर – नवंबर**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात	सितम्बर–नवंबर–दिसम्बर–मार्च	15.20
फूल गोभी	**जून –जुलाई–सितम्बर–नवंबर**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात	सितम्बर – नवंबर	15.20
प्याज	**जून–जुलाई–अक्टूबर–नवंबर**	1.5	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात	दिसम्बर – मार्च	15.20
मोरिंगा (सहजन)	**जून – जुलाई**	0.05	बीज से पौध तैयार करने के पश्चात		40.50

चिया की उन्नत उत्पादन तकनीक

सुरेन्द्र कुमार, प्रियंका एवं सरिता
कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

तुलसी कुल की यह फसल वानस्पतिक रूप से साल्विया हिस्पैनिका नाम से जानी जाती है। उच्च पोषक तत्व युक्त यह फसल एक उत्कृष्ट खाद्य है इसके बीजों में पाये जाने वाले प्रतिउपचारक, वसीय अम्ल, प्रोटीन, खनिज लवण इत्यादि इसकी उपयोगिता मोटापे, मधुमेह, हृदय सम्बन्धित रोगों, उच्च रक्तचाप आदि बिमारियों के लिये सिद्ध करते हैं। पिछले कुछ वर्षो में इस फसल ने मानव पोषण और स्वास्थ्य के लिए लाभकारी स्वास्थ्य प्रभावों के कारण भारतीय बाजार में अपनी जगह स्थापित की है इस संदर्भ में चिया किसानों की आय दुगुने करने के प्रश्न और उद्योगों के लिए एक लाभप्रद विकल्प के रूप में उभरी है।

पोषक मान : चिया बीज में पाये जाने वाले फाइबर, प्रोटीन, आवश्यक अमीनों अम्ल इसकी उपयोगिता विभिन्न रोगों के लिए दर्शाते हैं। चिया बीज में मनुष्य शरीर के लिए आवश्यक लगभग सभी अमीनों अम्ल पाए जाते हैं

तालिका :1 चिया में उपस्थित आवश्यक पोषक तत्वों का विवरण (मि.ग्रा./100 ग्राम)

ऊर्जा	486	जिंक (मि.ग्रा.)	4.58
प्रोटीन (ग्राम)	16.54	तांबा (मि.ग्रा.)	0.924
कुल वसा (ग्राम)	30.74	मैग्नीज (मि.ग्रा.)	2.723
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	42.12	विटामिन सी (मि.ग्रा.)	1.6
रेशा (ग्राम)	34.4	थाईमिन (मि.ग्रा.)	0.62
कैलशियम (मि.ग्रा.)	631	राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.17
लोहा (मि.ग्रा.)	7.72	नियासीन (मि.ग्रा.)	8.83
मैगनीशियम (मि.ग्रा.)	335	फोलेट (मि.ग्रा.)	49
फास्फोरस (मि.ग्रा.)	860	विटामिन ए (आई.यू.)	54
पोटेशियम (मि.ग्रा.)	407	विटामिन ई (आई.यू.)	0.5
सोडियम (मि.ग्रा.)	16	कॉलेस्ट्रोल (मि.ग्रा.)	0

उपयोग: चिया के बीज का उपयोग दही या दलिया में मिलाकर या सलाद, सूप और मिठाई में एक कुरकुरा स्वाद लाने के लिये ऊपर से छिड़ककर किया जा सकता है। सूखी चिया के बीजों को पेय प्रदार्थो और जूस में भी मिलाया जा सकता है। चिया के बीज को अंकुरित कर या उन्हें एक पौष्टिक आटे में पीसकर पकाने के लिए उपयोग कर सकते हैं।
प्राचीन समय में माना जाता था कि चिया के बीज का एक बड़ा चमचा एक योद्धा को 24 घंटे ताकत प्रदान कर सकता है। वर्तमान समय में बहुत से एथलीट और लंबी दूरी के धावक इसका उपयोग अपने आप को सक्षम बनाये रखने हेतु करते हैं। स्वास्थ्य परक चिया बीज का तेल विशेष रूप से मधुमेह और गुर्दे की शिथिलता के रोगियों में जेरोटिक जैसे त्वचा रोगों के लिए अत्यधिक उपयोगी है।

उन्नत किस्में: भारत में चिया फसल पर अनुसंधान विकास के प्राथमिक चरण में है। पिछले वर्षो में किए गये जननद्रव्य परीक्षणों के आधार पर क्षेत्रीय परिस्थितियों में बेहतर निष्पादन करने वाले जीनप्रारूपों को किस्म के रूप में विमोचित करवाने हेतु प्रयाश जारी हैं।

जलवायुवीय परिस्थितियाँ: चिया उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय वातावरण में स्वाभाविक रूप से बढ़ने वाला पौधा है। यह न्यूनतम 11.0 और अधिकतम 36.0 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान व 400 से 2500 मीटर तक ऊंचाई वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है।

मृदा व खेत की तैयारी : चिया की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। परंतु बेहतर निष्पादन व उत्पादन हेतु उत्तम जल निकास वाली कार्बनिक प्रदार्थ युक्त दोमट या काली मृदा जिसका पी. एच. मान 6.0 से 7.0 के मध्य हो, में इसकी खेती सर्वाधिक उपयुक्त होती है। बुवाई पूर्व खेत को अच्छी तरह से तैयार कर भुरभुरा व खरपतवार रहित बना लेवें।

बीज की मात्रा व बुवाई : बीज का आकार छोटा होने के कारण सामान्यतया चिया की बुवाई छिटकवा विधि से की जाती है। छिटकवा विधि में एक हेक्टेयर के लिये 4–5 किग्रा. बीज आवश्यक होता है। जबकि बीज के साथ बारीक मिटटी मिलाकर कतार में बुवाई करने पर 3–4 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है। कतार में बुवाई अधिक उत्पादन प्रदान करती है इस हेतु कतार से कतार की दूरी 30–45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. हो। बीज को 2–3 सेमी. से अधिक गहरा न बोयें। इसकी बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा है।

खाद व उर्वरक : चिया के उच्च उत्पादन हेतु बुवाई पूर्व 8–10 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में डालें तथा इसके अतिरिक्त मृदा की स्वास्थ्य जाँच उपरांत आवश्यकतानुसार सामान्य मात्रा में नत्रजन व फास्फोरस देवें। अत्यधिक नत्रजन देने से पौधे में रोग उत्पन्न होने की समस्या बढ़ जाती है।

सिंचाई व जल निकास : जल की उपलब्धता होने पर 4–5 सिंचाई देवें तथा जल निकास का विशेष ध्यान रखें। जल निकासी की उचित व्यवस्था न होने पर पौधे जमीन पर गिर जाते हैं तथा रोग उत्पन्न होने की सम्भावना बढ़ जाती है। फूल बनते समय व दाना पकते समय सिंचाई अवश्य दें।

निराई व गुड़ाई : चिया में बढ़वार की प्रारम्भिक अवस्था में खेत को खरपतवारों से अवश्य मुक्त रखें। इस हेतु पहली निराई, बुवाई के 30–35 दिनों उपरांत तथा दूसरी निराई पुष्पक्रम दिखने की अवस्था पर 60–70 दिन उपरांत करें। बेहतर वायु संचार हेतु निराई उपरांत हल्की गुड़ाई अवश्य करें।

कीट व रोग : चिया की फसल में कीट व रोगों का प्रभाव अपेक्षाकृत रूप से कम रहता है फिर भी यदि बुवाई देरी से की गयी है या सिंचाई अंतराल अधिक रखा गया है तो कुछ रोगों के आने की संभावना रहती है जिससे कुछ नुकसान संभव है।

मेक्रोफोमीना : दाना पकने की अवस्था में मेक्रोफोमीना कवक जनित एक रोग दिखाई देता हैं जिसमें पूरा पौधा सूख कर काला पड़ जाता है और प्रभावित पौधे में बीज नही बन पाता है। इस रोग की रोकथाम हेतु कृषि अनुसंधान केंद्र पर प्रयोग किए जा रहें हैं। फिर भी यदि रोग का प्रभाव ज्यादा दिखाई दे तो इसकी रोकथाम हेतु मेंकोजेब 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण का 1.5 से 2.0 ग्राम/लीटर की दर से घोल बनाकर छिड़काव कर सकते हैं।

दीमक : इस कीट का प्रकोप प्रायः सभी फसलों में देखा जाता है। चिया की फसल में इसका प्रकोप बढ़वार की अवस्था में दिखाई देता है। यह कीट पौधे की जड़ो को काट देता है जिससे पौधा पौषण ग्रहण नहीं कर पाता व सूख कर मर जाता है। दीमक के प्रभावी रोकथाम हेतु क्लोरोपाइरीफोस 20 ई.सी. कीटनाशी प्रयोग कर 4 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि को उपचारित करें।

कटाई व गहाई : चिया की फसल बुवाई के लगभग 120–150 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है। इस समय पौधे की पत्तियाँ पीली पड़कर सूखने लगती हैं व बाली का रंग भूरा पड़ जाता है। बाली हाथ से मलने पर दाना आसानी से निकालने लग जाये तो इसको पूर्ण परिपक्व माना जाता है। फसल की कटाई उपरांत इसे 2–3 दिनों के लिये खलिहान में सुखायें तथा उसके उपरांत गहाई करें।

उपज : चिया की फसल की सामान्य उत्पादन क्षमता प्रति हेक्टेयर 5.0–6.0 क्विंटल है। परंतु बेहतर प्रबंधन गतिविधियाँ अपनाकर आसानी से 8.0–10.0क्विंटल प्रति हेक्टेयर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

❋❋❋

मशरूम उत्पादन का प्रबंधन एवं विपणन

लोकेश कुमार मीना, मीरा कुमारी एवं के. सी. मीना
कृषि महाविद्यालय, कोटा, कृषि महाविद्यालय, सबोर भागलपुर (बिहार) एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, अंता–बारां

मशरूम विशेष प्रकार की फफूंदों का फलनकाय है, जिसे फुटु, छत्तरी, भिभौरा, छाती, कुकुरमुत्ता, ढिगरी आदि नामों से जाना जाता है। मशरूम खेतों में, मेढ़ों में, वनों में प्राकृतिक रूप से विभिन्न प्रकार के माध्यमों में निकलते है। इनमें खाद्य, अखाद्य, चिकित्सीय, जहरीले एव अन्य मशरूम होते है। खाद्य मशरूम ग्रामीणों द्वारा बहुतायत में पसंद किये जाते है। वैज्ञानिकों ने इन जंगली मशरूमों को एकत्र कर प्रयोगशाला में इनके विकास का पूर्णरूपेण अध्ययन किया एवं इनकी उत्पादन विधि विकसित की। आज अनेक प्रकार के मशरूम को न केवल प्रयोगशाला में उगाया जा रहा है, वरन उनकी व्यावसायिक खेती कर उनका निर्यात एवं आयात कर कृषि अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ किया जा रहा है। मशरूम उत्पादन में भारतवर्ष पिछड़ा है। यहाँ पर मशरूम अनुसंधान एवं उत्पादन वृद्धि दर संतोषप्रद है भारतवर्ष में आज लगभग 1.00 लाख टन मशरूम का उत्पादन हो रहा है, जिसमें 85 प्रतिशत हिस्सा सफेद बटन मशरूम का है। दूसरे क्रम में आयस्टर, पैरा मशरूम एवं दूधिया मशरूम है।

मशरूम क्या है?

मशरूम "कुकुरमुत्ता" नहीं अपितु फफूंदों का फलनकाय है, जो पौष्टिक, रोगरोधक, स्वादिष्ट तथा विशेष महक के कारण आधुनिक युग का एक महत्वपूर्ण खाद्य आहार है। बिना पत्तियों के, बिना कलिका, बिना फूल के भी फल बनाने की अदभूत क्षमता, जिसका प्रयोग भोजन के रूप में, टानिक के रूप में औषधि के रूप में सम्पूर्ण उत्पत्ति बहुमूल्य है। मौसम की अनुकूलता एवं सघन वनों के कारण भारतवर्ष में पर्याप्त प्राकृतिक मशरूम निकलता है। ग्रामीणजन इसका बड़े चाव से उपयोग करते है। उनकी मशरूम के प्रति विशेष रूचि है इसीलिये इन क्षेत्रों में व्यावसायिक स्तर पर उत्पादित आयस्टर एवं पैरा मशरूम की अधिक मांग है। कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र में किये गये अनुसंधान कार्य से यह निष्कर्ष निकाला गया है की इस क्षेत्र में व्यावसायिक स्तर पर चार प्रकार के मशरूम उगाये जा सकते है :

1. आयस्टर मशरूम (प्लुरोटस प्रजाति)
2. पैरा मशरूम (फुटु) (वोल्वेरियेला प्रजाति)
3. सफेद दुधिया मशरूम (केलोसाइबी इंडिका)
4. सफेद बटन मशरूम (अगेरिकस बाइसपोरस)

इनमें आयस्टर मशरूम उत्पादन की संभावनायें अधिक हैं क्योंकि इसे कृत्रिम रूप से वर्ष भर उगाया जा सकता है। पैरा मशरूम एवं दूधिया मशरूम के प्राकृतिक रूप से व्यापारिक उत्पादन की संभावनायें अपेक्षाकृत कम हैं क्योंकि इसे कम अवधि (चार माह) तक उगाया जा सकता है। पैरा मशरूम उत्पादन के पश्चात इसका शीघ्र विपणन भी एक समस्या है। सफेद बटन मशरूम पर किये गये प्रयोगों से यह स्पष्ट है कि ठंड के मौसम में बस्तर के पठारी क्षेत्रों में दो फसल आसानी से ली जा सकती है। इस तरह कृत्रिम रूप से विभिन्न मशरूमों को उगाकर इनकी उपलब्धता को बरसात के अलावा साल भर तक बढ़ाया जा सकता है एवं उपभोक्ताओं की माँग की पूर्ति की जा सकती है।

मशरूम फसल प्रबंधन

आयस्टर मशरूम उत्पादन करते समय निर्जीवीकृत माध्यम में उपयुक्त नमी की अवस्था (68–70 प्रतिशत) में 30 ग्राम बीज/किलो गीला माध्यम की दर से मिलाया जाता है। मिलाने का काम साफ पक्के फर्श पर या साफ पालीथिन की चादर पर किया जाता है। इस मिश्रण को माध्यम आकार (18"X12") की पालीथिन की थैलियों में अच्छे से दबाकर भरा जाता है। थैली का तीन चौथाई भाग ही भरा जाता है तथा शेष एक चौथाई भाग खाली रखते है। थैली के मुँह को रस्सी से अच्छी तरह बाँध देते हैं और थैलियों में नीचे के दोनों कोनों पर 4–5 छेद कर देते हैं ताकि अतिरिक्त पानी इन छिद्रों से निकाल जाय एवं हवा के आवागमन हेतु 5–6 छिद्र थैली में ऊपर कर देते हैं। इन बीज (स्पान) मिश्रित थैलियों को झोपड़ी में लकड़ी की बनी टाडों (रेक) में लटका देते है या फिर नायलोन की रस्सी के माध्यम से 4–5 थैलियों को एक के ऊपर एक विधि से लटका देते है।

झोपड़ी मिट्टी की घास–फूस या पत्तियों की, बाँस की चटाई आदि की बनी हो सकती है। झोपड़ी में सूर्य का सीधा प्रकाश नहीं आना चाहिये तथा तापमान 25–28 डिग्री से.ग्रे., नमी 75–85 प्रतिशत व शुद्ध हवा की समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। नमी कम तथा तापमान अधिक होने पर पानी का छिडकाव स्प्रेयर द्वारा जमीन तथा झोपड़ी की दीवारों पर अन्दर की तरफ किया जाना चाहिये। थैलियों को झोपड़ी में लटकाने के 15–20 दिनों बाद मशरूम फफूँद का कवकजाल सम्पूर्ण माध्यम में फैल जाता है, जिससे माध्यम सफेद दूधिया रंग का दिखाई देने लगता है। इस समय पालीथिन की थैलियों को काटकर अलग कर देते है। यह मशरूम की वानस्पतिक वृद्धि अवस्था कहलाती है।

पॉलीथिन की थैली हटाने के पश्चात जो पिंडनुमा संरचना प्राप्त होती है, इसे सुतली या नायलोन की रस्सी से लटका देते है। यह मशरूम की प्रजनन अवस्था होती है। इस अवस्था में थैलियों की उचित देखभाल अत्यंत आवश्यक है। दो पिंडनुमा संरचना के बीच का अंतर 10–12 इंच होना चाहिये। थैली हटाने के 3–4 दिन बाद सफेद गांठनुमा संरचना दिखने लगती है जो फफूँद की बटन अवस्था या पिनहेड अवस्था कहलाती है। यह संरचना 5–7 दिन बाद छत्तेनुमा आकृति की फलनकाय

में बदल जाती है। जब फलनकाय के किनारे अन्दर की ओर मुड़ने लगे, तब हल्का घुमाकर उसे तोड़ लेते है। यही मशरूम फफूँद का खाने योग्य भाग होता है।

इस तरह पहली फसल क्रमशः 22–25 दिन में प्राप्त होती है। दूसरी व तीसरी फसल क्रमशः 5 से 7 दिन के अंतर से प्राप्त होती है। इस तरह एक फसल में 45–50 दिन का समय लगता है एवं 4–5 फसलें जुलाई से मार्च माह तक ली जा सकती है। आयस्टर मशरूम को माध्यमों में उगाने के पश्चात उसका उपयोग पुनः स्पान जैसा किया जा सकता है परन्तु इसकी उपज अपेक्षाकृत कम होती है। ध्यान रहे की मशरूम उत्पादित माध्यम उपज के लिए अधिक श्रेष्ठ नहीं है, किन्तु स्पान की उपलब्धता न होने की स्थिति में उत्पादक इसका प्रयोग करते है।

कुछ विशेष बाते जो मशरूम के प्रबंधन मे ध्यान रखना चाहिए

- सड़े–गले भूसे का उपयोग नही करना चाहिए।
- पोलिथीन ओर रस्सी को उपयोग मे लेने से पहले उसे 2% फोर्मलीन से कुछ समय तक उपचारित करके साफ पानी से साफा करे। उत्पादन और बिजाइ कक्ष को भी 2% फोर्मलीन और 0-15% मेलाथियान से शोधित करना चाहिए।
- ताजा बीज का उपयोग करना चाहिए क्योकि अगर आप महीने से ज्यादा पुराना बीज उपयोग करते हे तो उनकी प्रजनन क्षमता कम हो जाती हे।

मशरूम का विपणन

विपणन एक सतत प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत मार्केटिंग मिक्स (उत्पाद, मूल्य, स्थान, प्रोत्साहन जिन्हें प्रायः 4 Ps कहा जाता है) की योजना बनाई जाती है एवं कार्यान्वयन किया जाता है। यह प्रक्रिया व्यक्तियों और संगठनों के बीच उत्पादों, सेवाओं या विचारों के विनिमय हेतु की जाती है। विपणन को एक रचनात्मक उद्योग के रूप में देखा जाता है, जिसमे शामिल विज्ञापन, वितरण और बिक्री इसका सम्बन्ध ग्राहकों की भावी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का पूर्व विचार करने से भी है, जो प्रायः बाजार शोध के माध्यम से पता लगाई जाती हैं। मूलतः विपणन किसी संगठन को बनाने या निर्देशित करने की प्रक्रिया है, ताकि लोगों को सफलतापूर्वक वह उत्पाद या सेवा बेची जा सके जिसकी न केवल उन्हें जरूरत है बल्कि वे उसे खरीदने के इच्छुक भी हैं। इसलिए विपणन की व्यवस्था इस काबिल होना चाहिए कि वह उपभोक्ताओं हेतु एक ''प्रस्ताव'' या लाभों का सेट बना सके, ताकि उत्पादों या सेवाओं के माध्यम से ग्राहक को उसके पैसे का मूल्य अदा किया जा सके। इसके विशेषज्ञ क्षेत्रों में शामिल हैं : जेसे की

1. खुदरा बिक्री 2. वैश्विक विपणन 3. अंतरराष्ट्रीय विपणन 4. सामाजिक प्रभाव विपणन 5 .संचार 6. जन संपर्क 7. विज्ञापन और ब्रांडिंग 8. पड़ोस विपणन 9. डेटाबेस विपणन 10. इंटरनेट विपणन 11. सर्च इंजन विपणन 12. क्षेत्रीय विपणन 13. पेशेवर 14. औद्योगिक विपणन 15. विपणन रणनीति 16. ब्लूटूथ विपणन 17. बाजार शोध 18. प्रत्यक्ष विपणन स्थान 19. विपणन योजना 20. अनुभाविक विपणन

विपणन के दो प्रमुख घटक : नए ग्राहकों को शामिल करना जिसे हम अधिग्रहण कहते हे तथा मौजूदा ग्राहकों को बनाए एवं उनके साथ संबंधों का विस्तार करना जिसे हम आधार प्रबंधन कहते हे। एक बार जब विक्रेता आने वाले खरीदार को अपना ग्राहक बना लेता है तो आधार प्रबंधन शुरू हो जाता है। आधार प्रबंधन के तहत जो प्रक्रिया आरम्भ होती है उसमें विक्रेता अपने ग्राहक के साथ रिश्ते विकसित करता है, संबंधों को पोषण देता है, दिए जा रहे फायदों में ईजाफा करता है और अपने उत्पाद/सेवा को निरंतर बेहतर बनाता है ताकि उसका व्यापार प्रतिस्पर्धियों से सुरक्षित रहे।

विपणन योजना की सफलता के लिए 4 Ps का मिश्रण उपभोक्ताओं या लक्षित बाजार की मांगों व जरूरतों में प्रतिबिंबित होना चाहिए। एक बाजार खंड को वह खरीदने के लिए राजी करना जिसकी उन्हें जरूरत नहीं, बहुत ही खर्चीला काम है और शायद ही कभी सफल होता है। विपणक, औपचारिक और अनौपचारिक दोनों तरह के विपणन अनुसंधान से प्राप्त जानकारी पर निर्भर करते हैं और यह तय करते हैं की ग्राहक क्या चाहता है और उसके लिए कितना भुगतान करने का इच्छुक है। विपणक आशा करते हैं की इस प्रक्रिया से उन्हें एक सतत् प्रतियोगी लाभ हासिल होगा. विपणन प्रबंधन इस प्रक्रिया हेतु व्यावहारिक अनुप्रयोग है। प्रस्ताव भी 4 Ps सिद्धांत का एक महत्वपूर्ण अंग है। ये चार Ps निम्न हैं–

1. **उत्पाद :** विपणन का उत्पाद संबन्धी पहलू वास्तविक माल या सेवाओं के ब्यौरे के बारे में की यह कैसे अन्तिम–उपयोगकर्ता की जरूरतों एवं मांगों से सम्बंधित है। एक उत्पाद के दायरे में कुछ सहयोगी तत्व भी आते हैं जैसे वारंटी, गारंटी और सपोर्ट

2. **मूल्य निर्धारण :** का आशय किसी उत्पाद का एक मूल्य निर्धारित करने से है, जिसमें छूट भी शामिल होती है। जरूरी नही की मूल्य, मुद्राओं में ही हो – यह उस उत्पाद या सेवा के बदले में दी जा सकने वाली कोई चीज हो सकती है जैसे समय, ऊर्जा, मनोविज्ञान या ध्यान।

3. **संवर्धन :** इसमें शामिल हैं विज्ञापन , बिक्री संवर्धन, प्रचार और व्यक्तिगत बिक्री, ब्रांडिंग और उत्पाद, ब्रांड , या कंपनी के संवर्धन हेतु विभिन्न पद्धतियाँ.

4. **नियोजन या वितरण :** इससे तात्पर्य है की उत्पाद किस तरह उपभोक्ता तक पहुंचेगाय उदाहरण के लिए बिक्री व्यवस्था का बिन्दु या खुदरा बिक्री। इस चौथे P को कई बार स्थान भी कहा

जाता है। इसका तात्पर्य है कि किस चैनल के जरिये एक उत्पाद या सेवाओं को बेचा जाएगा (जैसे ऑनलाइन बनाम खुदरा), कौन से भौगोलिक क्षेत्र या उद्योग में, किस खंड को (युवा व्यस्क, परिवार, व्यवसायी लोग) आदि इसके अलावा यह भी की जिस वातावरण में उत्पाद बेचा जाएगा वह कैसे बिक्री को प्रभावित कर सकता है।

ये चार तत्व विपणन मिश्रण, के तौर पर जाने जाते हैं जिनका उपयोग एक विक्रेता विपणन योजना बनाने के लिए करता है। कम कीमत के उपभोक्ता उत्पाद के विपणन में चार P का मॉडल सबसे अधिक काम आता है। औद्योगिक उत्पादों, सेवाओं, उच्च मूल्य के उपभोक्ता उत्पादों के मामले में इस मॉडल में समायोजन करना पड़ता है। सेवा विपणन बेजोड़ किस्म की सेवाओं के लिए होना चाहिए. औद्योगिक या B„B विपणन (बिजनस टु बिजनस), उन दीर्घकालीन अनुबंधों के लिए होना चाहिए। जो आपूर्ति श्रृंखला के मामलों में विशिष्ट हों. संबंधों का विपणन में विपणन को दीर्घकालीन संबंधों के परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है बजाय व्यक्तिगत व्यवहार के।

अमेरिकी विपणन संघ के अनुसार, विपणन एक संगठनात्मक कार्य और प्रक्रियाओं का एक समूह है जिससे ग्राहक बनाये जाते हैं, उनसे संप्रेषण किया जाता है और उन्हें उपयोगिता प्रदान की जाती है तथा उपभोक्ता से रिश्ते बनाये जाते हैं ताकि संगठन एवं उसके हितधारकों को लाभ मिलें। विपणन के तरीकों की सूचना कई सामाजिक विज्ञानों में दी गयी है खासकर मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र में. मानव शास्त्र का प्रभाव भी छोटा लेकिन बढ़ता हुआ है। बाजार अनुसंधान इन गतिविधियों को मजबूती देता है। विज्ञापन के माध्यम से विपणन कई रचनात्मक कलाओं से भी जुड़ता है। विपणन एक विस्तृत एवं कई प्रकाशनों से बड़े स्तर पर परस्पर सम्बद्ध विषय है। यह समय व संस्कृति के अनुसार खुद को और अपनी शब्दावली को नए तरीके से दुबारा गढ़ने के लिए प्रख्यात है।

विपणन के दो स्तर

1. **रणनीतिक विपणन :** यह निर्धारित करने का प्रयास की एक संगठन बाजार में अपने प्रतिद्वंदियों से कैसे मुकाबला करें। विशेष रूप से, इसका उद्देश्य अपने प्रतियोगियों के सापेक्ष एक लाभदायक बढ़त लेना है।
2. **परिचालन संबन्धी विपणन :** ग्राहकों को आकर्षित करना व उन्हें बनाये रखना है और उनके लिए अधिक से अधिक उपयोगी होना है। साथ ही तत्पर सेवाओं द्वारा ग्राहक को संतुष्ट करना और उसकी अपेक्षाओं पर खरा उतरना है।

मशरूम विपणन के चैनल

1. **मशरूम उत्पादक से उपभोक्ता :** इसे हम प्रत्यक्ष ओर डाइरैक्ट विपणन भी कहते हे। इस चौनल मे उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का 100 प्रतिशत मिलता है। क्योकि इसमे बीचोलिए जेसे की एजेंट, थोक व्यापारी, खुदरा व्यापारी नहीं होते हे।
2. **मशरूम उत्पादक से एजेंट को और उससे ग्राहक को** : इस चौनल के अंतर्गत उत्पादक और ग्राहक के बीच केवल एक बिछोलिया जो की एजेंट होता हे। इसलिए इस चैनल मे उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का हिस्सा प्रथम चैनल से कम मिलता है।
3. **मशरूम उत्पादक से थोक व्यापारी को, उससे खुदरा व्यापारी को और उससे ग्राहक को :**? यह विपणना का पारंपरिक तरीका हे जिसके अंतर्गत थोक व्यापारी और खुदरा व्यापारी बीचोलिए की तरह काम करते हे और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गये मशरूम के मूल्य से अपना मार्जिन निकालते हे। इसलिए इस चैनल मे उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का बहुत कम मिल पाता हे। इसमे पहले थोक व्यापारी उत्पादक से मशरूम खरीदता हे फिर थोक व्यापारी से यह मुशरूम खुदरा व्यापारी खरीदता और खुदरा व्यापारी इस मशरूम को अंत मे ग्राहक को बेचता है।
4. **मशरूम उत्पादक से एजेंट को, उससे खुदरा व्यापारी और फिर ग्राहक :** यह विपणन का वर्तमान तरीका हे जिसके अंतर्गत एजेंट और खुदरा व्यापारी बीचोलिए की तरह काम करते हे और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य से अपना मार्जिन निकालते हे। इसलिए इस चौनल मे उपभोक्ता को मशरूम ज्यादा मूल्य पर पर मिलता हे और साथ ही साथ उपभोक्ता के मूल्य मे उत्पादक का हिस्सा भी घट जाता है।
5. **मशरूम उत्पादक से एजेंट को, उससे थोक व्यापारी को, उससे खुदरा व्यापारी और फिर ग्राहक को :** इस चैनल के अंतर्गत एजेंट, थोक और खुदरा व्यापारी बीचोलिए होते है और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य से अपना मार्जिन निकालते हे। इसलिए इस चौनल मे उपभोक्ता को मशरूम ज्यादा मूल्य पर मिलता हे और साथ ही साथ उपभोक्ता के मूल्य मे उत्पादक का हिस्सा भी घट जाता हे। क्योकि इस चैनल मे इसमे पहले एजेंट उत्पादक से मशरूम खरीदता हे फिर थोक व्यापारी इस मशरूम को एजेंट से खरीदता हे फिर यह मशरूम खुदरा व्यापारी खरीदता और खुदरा व्यापारी इस मशरूम को अंत मे ग्राहक को बेचता हे एसलिए यहा इस मशरूम के लिए ग्राहक को ज्यादा कीमत देनी पड़ती हे।

उत्पाद डिजाइन का क्रम

1. उत्पाद विचारों की रचना एवं विकास
2 उत्पाद विचारों के द्वारा चुनाव एवं छानना

3 उत्पाद कांसेप्ट की रचना और परीक्षण.
4 उत्पाद कांसेप्ट के बजाय बिजनस का विश्लेषण करना.
5 भावनात्मक उत्पाद की रचना और परीक्षण.

अच्छी पैकेजिंग की जरूरतें

1 कार्यात्मक – सामग्री की प्रभावी ढंग से संभाल व सुरक्षा वितरण, बिक्री, खोलने, उपयोग, पुनः प्रयोग आदि के दौरान सुविधा प्रदान करे।
- पर्यावरण की दृष्टि से जिम्मेदार हो।
- लक्षित बाजार हेतु ठीक से डिजाईन किया गया हो।
- नजरों पर छा जाने वाला हो (खासकर रिटेल/ कंज्यूमर सेल में) उत्पाद तथा पैकेज की विशेषताओं को सूचित और उनके इस्तेमाल की सिफारिश करें।
- खुदरा विक्रेताओं की आवश्यकताओं के मुताबिक हो।
- उद्यम की छवि को बढ़ावा दें।
- प्रतियोगियों के उत्पादों से अलग नजर आए।
- उत्पाद व पैकेजिंग की कानूनी शर्तो का पालन करें।
- सेवा और उत्पाद आपूर्ति में अन्तर बिन्दु।
- आदर्श उत्पाद, आदर्श रंग के लिए।

पैकेजिंग के प्रकार

- विशेषता पैकेजिंग – उत्पाद की विशिष्ट छाप पर जोर देती है।
- दोहरे उपयोग हेतु पैकेजिंग।
- युग्म पैकेजिंग दो या अधिक उत्पाद एक ही कंटेनर में।
- बहुरूपदर्शी पैकेजिंग –एक श्रृंखला या खास थीम को दर्शाते हुए पैकेजिंग लगातार बदलती जाती है।
- तत्काल खपत हेतु पैकेजिंग– उपयोग के पश्चात फेंक दी जाती है।
- पुनः बिक्री हेतु पैकेजिंग – खुदरा व थोक व्यापारी के लिए उचित मात्रा में पैकिंग।

ट्रेडमार्क का महत्व

- एक कंपनी के माल को दूसरी कंपनी के माल से अलग करता है।
- गुणवत्ता के लिए विज्ञापन का काम करता है।
- उपभोक्ताओं और निर्माताओं दोनों को सुरक्षित रखता है।
- प्रदर्शन और विज्ञापन अभियानों में प्रयुक्त होती है।
- नए उत्पादों को बाजार में उतारने के लिए काम आती है।

ब्रांड्स

ब्रांड एक नाम, शब्द, डिजाइन, प्रतीक या कोई अन्य विशेषता है जो किसी उत्पाद या सेवा को प्रतिस्पर्धी के प्रस्ताव से अलग करता है। एक ब्रांड किसी संगठन, उत्पाद या सेवा के प्रति उपभोक्ता के अनुभव का प्रतिनिधित्व करता है। ब्रांड को एक पहचाने जाने योग्य सत्ता के रूप में भी परिभाषित किया जाता है जो एक विशिष्ट मूल्य का वादा करती हैं।

मांग की प्रकृति

- लोचदार
- स्थिर

बाजार के प्रकार

- पूर्ण प्रतियोगिता।
- एकाधिकारपूर्ण प्रतियोगिता।
- एकाधिकार।
- अल्पाधिकार।

प्रत्यक्ष बिक्री विधियों के कारण

- निर्माता उत्पादों को प्रदर्शित करना चाहता है।
- थोक व्यापारी, खुदरा विक्रेता और एजेंट बिक्री में सक्रिय नहीं होते।
- निर्माता थोक व्यापारियों और खुदरा विक्रेताओं को उत्पाद का स्टॉक करने के लिए समझा नहीं पाता।
- थोक व्यापारी और खुदरा विक्रेता माल में उच्च लाभ के लिए मार्जिन जोड़ देते हैं।
- बिचौलिए माल की ढुलाई नहीं कर पाते।

अप्रत्यक्ष बिक्री के कारण

- निर्माता के पास माल का वितरण करने हेतु वित्तीय संसाधन नहीं होते।
- वितरण चैनल पहले ही स्थापित होते हैं।
- निर्माता को कुशल वितरण का ज्ञान नहीं होता।
- निर्माता अपनी पूंजी का प्रयोग और अधिक उत्पादन के लिए करना चाहता है।
- बहुत बड़े क्षेत्र में बहुत से ग्राहकों के होने से पहुँचना मुश्किल हो जाता है।
- निर्माता के पास उत्पादों का विस्तृत वर्गीकरण नहीं होता कि वह कुशल विपणन कर सके।

तालिका 1 : विभिन्न प्रकार की मुशरूम का आर्थिक महत्व

मशरूम का प्रकार	उत्पादन खर्च (रुपया प्रति किलोग्राम	बिक्री दर (प्रति कि.ग्रा.)	शुद्ध लाभ (प्रति कि.ग्रा.)
आयस्टर	30–35	100	65–70
बटन	70–75	125	50–55
गर्मा बटन	70–75	100	125
पेड़ी स्ट्रॉ	30–35	100	60–70
श्वेत दूधया	30–35	100	60–65

कृषि विपणन में सूचना संचार प्रौधोगिकी की बढती भूमिका

सुनील कुमार, पूनम कश्यप, पीयूष पूनिया एवं अमृतलाल मीणा
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम, मरेठ–250110

सूचना संचार प्रौधोगिकी, भारतीय कृषि में क्रांतिकारी बदलाव लाने की क्षमता रखती है। इसकी सहायता से न केवल बडे अपितु मध्यम, छोटे एवं सीमांत कृशकों को भी लाभ पहुँचा सकते है। आज कृषि एवं पशुधन क्षेत्र में तकनीकी विकास में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। फसलों एवं पशुओं के लगभग सभी रोगों हेतु दवाइयाँ/टीके/समाधान उपलब्ध हैं फसलों की ऐसी नवीनतम किस्में खोजी जा चुकी है, जो कृषकों को कम लागत में अधिक पैदावार दे सकती है। इतने तकनीकी विकास के बावजूद आज भी हमारे कृषक नवीनतम कृषि एवं पशुपालन तकनीकी को नहीं अपना रहें है। इसका प्रमुख कारण है इन तकनीकियों के प्रति अनभिज्ञता साथ ही अच्छा उत्पादन होने के बाद भी समय पर उसका विपणन न कर पाना अथवा उचित मूल्य पर विपणन न कर पाने से भी कृषकों/पशुपालकों को नुकसान उठाना पड़ता है। सूचना का अभाव अथवा असामयिक सूचना इस नुकसान का सबसे बड़ा कारण है। आज भारत सरकार तथा अनेक विकास संस्थाएं कृषकों एवं पशुपालकों को सामयिक ज्ञान प्रदान करने के लिए संचार एवं सूचना प्रौधोगिकी से लैस सुविधाएं प्रदान कर रही है। इसका उद्देश्य है कृषि एवं पशुपालन द्वारा उनकी आजीविका में सुधार तथा नवीन तकनीकी को अपनाकर वे अपनी आय में वृद्धि कर सकें। आज हमारे देश में 105.8 करोड़ टेलीफोन उपभोक्ता है जिनमें 2.5 करोड़ वायर्ड टेलीफोन उपभोक्ता एवं 103.3 करोड़ वायरलैस टेलीफोन उपभोक्ता है।

सूचना का आदान–प्रदान

आज सोशल मीडिया, ज्ञान के विस्तार का सबसे प्रभावी माध्यम बन गया है पशुपालन और कृषि जैसे क्षेत्र भी अब इससे अछूते नहीं रह गए है। फेसबुक, ट्वीटर, व्हाटसऐप, यू–टयूब के माध्यम से हर तरीके की जानकारी ऑडियो, वीडियो और लिखित रूप मे प्राप्त की जा सकती है।

व्हाट्ाऐप

यह एक सोशल मीडिया आधारिता मोबाइल ऐप है इस ऐप द्वारा किसान अथवा पशुपालक अपने समूह बनाकर अनेक शोध, संस्थानों, वैज्ञानिकों, अन्य कृषि एवं पशुपालन संबंधी कंपनियों से जुड़कर ज्ञान का आदान–प्रदान कर सकते हैं इसका एक सजीव उदाहरण है ''यंग इन्नोवेटिव फार्मर्स'' समूह जो वर्ष 2014 में गुरदासपुर कृषि विकास अधिकारी द्वारा पंजाब में शुरू किया गया था। यहां तक कि समूह सदस्यों नें अपने और भी छोटे–छोटे समूह बनाकर दूसरे कृषकों को जानकारी प्रदान करनी शुरू कर दी है। पंजाब के किसानों के साथ–साथ इस समूह में अन्य राज्य जैसे उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश एवं मध्य प्रदेश के किसान भी जुडे हुए है। बालीराजा भी एक ऐसा व्हाट्सऐप समूह है, जो महाराष्ट्र के एक कृषक एवं इंजीनियर द्वारा बनाया गया आज इसके 11 से अधिक जुड़े हुए समूह है एवं 1000 कृषकों से ज्यादा सदस्य है तथा अनेक कृषि विशेषज्ञ, परामर्शी कार्यकर्ता तथा कृषि उत्पाद सप्लायर सम्मिलित हैं।

फेसबुक एवं ट्वीटर

फेसबुक की शुरूआत निजी जानकारी एवं सामाजिक दायरा बढाने के लिए हुई थी आज यह सूचना के आदान–प्रदान का सशक्त माध्यम बन गया है। अनेक संस्थाए अपने फेसबुक अकाउंट द्वारा अपने ग्राहकों को सभी प्रकार की जानकारी प्रदान कर रही है। साथ ही अनेक फेसबुक के समूहों ने तो जैसे कृषि की जानकारी के आदान–प्रदान में क्रांति ला दी है। इनमें से कुछ है। भारत जैविक खेती एसोसिएशन, केरल डेयरी फार्मिगं चर्चा समूह इत्यादि।

आज भारत सरकार के सभी मंत्रालयों के अपने फेसबुक एवं ट्वीटर पेज है, जिसके द्वारा उनके मंत्रालयों की विभिन्न योजनाओं की जानकारियां तुरंत लोगो तक पहुंच रही हैं पशुपालक एवं किसान भी भारत सरकार के कृषि मंत्रालय के फेसबुक पेज www.facebook.com/ministry of Agriculture india पर जाकर आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकते है। इसके अलावा कृषि एवं पशुपालन की नवीन योजनाओं की जानकारी व समीक्षा भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय के डेयर डिपार्टमें के सरकारी ट्वीटर हैंडल www.twitter.com/AgriGOI पर भी उपलब्ध है। पशुपालक एवं किसान सोशल साइट्स पर अपना अकाउंट बनाकर अपने सुझाव भी भेज सकते है।

कृषि विपणन में मोबाइल की बढती भूमिका

''आजकल मोबाइल फोन हर क्षेत्र में काम आ रहा है। लोग बडें–बडें बिजनेस मोबाइल पर कर रहें है। अतः किसानों को इस टेक्नोलॉजी को अपनाना पडेगा इन मोबाइल ऐप्स की सहायता से किसान, नवीनतम वस्तुएं और मंडी की कीमतों, कीटनाशक और उर्वरक, खेत और किसान संबंधी समाचारों का स्टीक उपयोग कर सकते है। इसके अतिरिक्त मौसम पूर्वानुमान और कृषि सलाह का भी लाभ उठा सकते है। सरकार की कृषि नीतियों और योजनाओं के बारें में कृषि सलाह और समाचार भी मोबाइल प्रदान करता है। यह सब मोबाइल ऐप के जरिये किया जा सका हैं इसलिए मोबाइल ऐप सॉफ्टवेयर को मोबाइल तकनीक का लाभ उठाने के लिए डिजाइन किया गया है'' मोबाइल, संचार प्रौधोगिकी गतिशील वृद्धि, विकासशील देशों में आर्थिक विकास सामाजिक सशक्तिकरण और

जमीनी स्तर पर नवाचार के लिए अवसर पैदा कर रही हैं मोबाइल एप्लीकेशन लाखों ग्रामीण वासियों को सूचना, बाजार और सेवाओं तक पहुंच प्रदान करके कृशि और ग्रामीण विकास एआरडी में मदद करता हैं। क्लाइड कम्प्यूटिंग, एकीकृत आईटी सिस्टम, ऑनलाइन शिक्षा और मोबाइल फोन के प्रसार की मदद से सबसे गरीब समुदायों के किसानों के बीच कृषि संबंधी जानकारी का प्रसार करना आसान हो गया है ऐसे संपर्क और सूचना प्रवाह का एक लाभ यह है कि यह किसानों को बेहतर भूमि प्रबंधन निर्णय लेने में मदद करता है। उदाहरण के लिए यह रोपण और फसल के मौसम को बेहतर योजना के लिए मौसम की स्थिति के साथ सामंजस्य बैठाने में मददगार सिद्व हो सकता हैं इसी प्रकार भौगोलिक सूचना प्रणाली को कीटनाशक और जानवरों की बीमारियों पर पूर्व–प्रभावी जानकारी प्रदान करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है ताकि किसान जोखिम के स्तर की दर से प्रतिक्रिया दे सकें। मोबाइल और क्लाउड कम्प्यूटिंग प्रौद्योगिकी उपयोग करके उर्वरक, बीज और पानी के उपयोग का अनुकूलन भी किया जा सकता है। यह खपत कम करते हुए किसानों को धन बचाने में मदद करता है। किसान कृषि आधारित विभिन्न जानकारियां जैसे फसल बीमा, फसल रोग, फसल आधारित अन्य सभी जानकारी, कृषि आधारित इनपुट्स या आदान, उत्पाद कहां किस मूल्य में बेचना है यह सब पता कर सकते है। किसान अपनी रणनीति बना सकते है। जैसे कि कौन सी फसल कब लगानी है कहां बेचनी है। और किस बाजार में बेचनी है इत्यादि।

किसान उपयोगी मोबाइल ऐप्स

किसान सुविधा

यह ऐप किसानों के सशकितकरण और गांवो के विकास की दिशा में काम करने के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा सन् 2016 में शुरू किया गया ऐप उपयोगकर्ता के अनुकूल इंटरफेस प्रदान करता है। यह वर्तमान मौसम के बारे में जानकारी देता है और अगले पांच दिनों के लिए पूर्वानुमान, निकटतम शहर में वस्तुओं/फसलों के बाजार मूल्य, उर्वरक, बीज मशीनरी आदि पर सूचना प्रदान करता है।

फसल बीमा

यह एप्लीकेशन किसानों को सूचित फसलों के लिए बीमा प्रीमियम की गणना करने में सहायता करती है। और उनकी फसल और स्थान के लिए सूचना कट–ऑफ तिथियाँ और कंपनी संपर्क प्रदान करता है। इसका इस्तेमाल किसी भी अधिसूचित क्षेत्र में सूचनाग्रस्त फसल की सामान्य बीमा राशि, विस्तारित बीमा राशि, प्रीमियम विवरण और सब्सिडी की जानकारी के लिए भी किया जा सकता है।

खेती–बाड़ी

यह एक सामाजिक पहल ऐप है। इसका उद्देश्य ''जैविक खेती'' को बढावा देना और समर्थन करना और भारत में किसानों से संबंधित महत्वपूर्ण सूचना या मुद्दों को प्रदान करना है। जैसा कि हम जानते है कि कृषि आज आनुवंशिक रूप से संशोधित बीज, रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों पर भारी निर्भर है। यह ऐप किसानों को रसायनिक खेती को जैविक खेती में बदलने में मदद करता है। हालांकि यह ऐप वर्तमान में केवल चार भाषाओं हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी और गुजराती में ही उपलब्ध है।

कृषि ज्ञान

खेती के बारे में सामान्य जानकारी देने के आलावा यह ऐप भारतीय किसानों को कृषि ज्ञान के विशेषज्ञों से जुड़ने और खेती से संबंधित प्रशन पूछने और सूचनाओं के माध्यम से आवेदन के भीतर उत्तर पाने में सक्षम बनाता है। किसान कृषि उत्साही भी एक–दूसरे के साथ अपने उत्तर साझा सकते है।

कृषि बाजार

भारत सरकार द्वारा फसल बीमा ऐप के साथ–साथ पेश किए गए इस ऐप को किसानों को फसल की कीमतों के बाजार मूल्य के बराबर रखने और संकट बिक्री के लिए उन्हे निरूत्साहित करने के उद्देश्य से विकसित किया गया है। किसान कृषि बाजार ऐप का उपयोग करके 50 किमी. के फासले में बाजार में फसलों की कीमतों से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकते हैं किसान ऐप के लिए एग्रोस्टार एक इंटरैक्टिव समाधान–आधारित दृष्टिकोण है किसान विभिन्न प्रकार के गुणवत्ता वाले उत्पादों जैसे कि बीजों, फसल संरक्षण और फसल पोशण उत्पादों और कृषि के लिए हार्डवेयर को सर्वश्रेष्ठ ब्रांड के अनुसार ब्राउज कर सकते है।

एग्रीडाटा

एग्रीडाटा ऐप मोबाइल की एक पूर्ण कृषि प्रबंधन प्रणाली है और उपयोग में आसान है। इसाके माध्यम से किसान बेहतर जानकारी के साथ स्वंय उपयुक्त निर्णय ले सकते हैं इस प्रकार यह प्रति एकड़ अधिक लाभ में मदद करता है।

मायएग्रीगुरू

इसे विशेष रूप से भारतीय किसानों के लिए डिजाइन किया गया है इसका उद्देश्य उनकी आय में वृद्धि करते हुए बेहतर और अभिनव खेती की दिशा में सहायता करना हैं खेती–बाडी पर आधारित यह ऐप सुनिश्चित करता कि भारत में हर किसान को नवीनतम कृषि प्रौधोगिकीयों और तकनीकों तक पहुँचाया जा सके।

किसान स्पेस–कृषि विपणन

इस ऐप का मिशन भारतीय किसानों को जोडने और सफल उत्पादक बनाने में सहायता करता है। किसान स्पेस युवा किसानों और कृषि शुरूआती लोगों को प्रेरित करता है। यह भारत में सबसे अच्छे कृषि अनुप्रयोगों में से एक है।

किसान स्पेस की विशेशताएं

यह एप्लीकेशन केवल कृषि पोस्ट आपके विचारों, समस्याओं, समाचारों, घटनाओं और व्यपार उत्पादों से संबंधित है।

- नि:शुल्क आपके व्यवसाय का प्रचार–प्रसार
- प्रकाशित होने से पहले प्रत्येक पोस्ट की समीक्षा व्यवस्थापक द्वारा की जाती है।
- केवल प्रासंगिक पोस्ट प्रकाशित की जाती है।
- उत्पादों से संबंधित मुफ्त विज्ञापन पोस्ट करें।
- तत्काल मैसेजिंग के जरिए किसान एक दूसरे से परामर्श कर सकते है।
- किसान स्पेस से सभी भारतीय किसानों से जुड़ने का सुनहरा मौका।

मार्ग मंडी सॉफ्टवेयर

यह एप्लीकेशन मंडी उद्योग में काम करने वाले कमीशन एजेंटों के लिए बहुत अच्छा है और मंडी उधोग में परिचालन प्रभावशीलता को बढाने के लिए कमीशन एजेंटों के लिए एक सकल समाधान प्रदान करता है।

एग्रीबज्ज

एग्रीबज्ज स्थान आधारित स्थानीय वर्गीकृत एग्री मार्केट एग्रीपैस है। इसकों किसान अपने मोबाइल फोन पर डाउनलोड या स्थापित कर सकते है। इसके द्वारा खेती समुदाय को एक साथ लाया जाता है और उनको ऐड/लिस्टिंग के माध्यम से मध्यस्थों के बिना स्थानीय रूप से कृषि उत्पाद और सेवाएं बेचने, खरीदने और उनका आदान–प्रदान करने में मदद करता है।

वे2 मार्केट

एग्री सीएम अद्वितीय व्यापार मंच है जो किसानों, व्यापारियों, प्रोसेसर, निर्यातकों, राज्य के बाहर के खरीदारों और इनपुट आपूर्तिकर्ता को एक साथ लाता है और उनके बीच व्यापारिक कार्यो को सुविधाजनक बनाकर कृषि उत्पादन और इनपुट दोनों के विपणन के मुद्दे को संबोधित करता है।

बिगहाट

भारत का सबसे बडा कृषि मंच है। बिग हाट सीधे किसानों के दरवाजे तक कृषि इनपुट प्रदान करता है। बिग हाट भारतीय किसानों के लिए नवीनतम कृषि प्रौधोगिकी और तकनीक तक पहुंच प्रदान करता है इस ऐप का लक्ष्य कृषि को अधिक लाभदायक बनाता है।

कृषि केन्द्र

भारत का पहला ऑनलाइन कृषि मेगा स्टोर जो बीज, कीटनाशक, उर्वरक, सूक्ष्म पोषक तत्वों, स्पेशलिटी कैमिकल्स, कृषि मशीनरी, एग्रो पम्प, प्लांट विकास नियामकों, सौर पंप, कृषि किताबें और सीडी और मुफ्त शिपिंग सुविधा के साथ विभिन्न कृषि इनपुट बेचता है। कृषि केंद्र पर ऑनलाइन बिक्री के लिए सभी कृषि संबंधित उत्पाद स्टॉक में उपलब्ध है। क्रेडिट कार्ड भुगतान सुविधा और नि:शुल्क शिपिंग के साथ।

राज मंडी

यह ऐप राजस्थान के कृषि विपणन विभाग से संबंधित जानकारी और विशेषताएं प्रदान करेगा। इस ऐप की विशेषताएं पहली–कमोडिटी दरें और आगमन, दूसरी–सक्रिय नीलामी, तीसरी–व्यापारी और दलाल।

इफको किसान

यह ऐप सन् 2015 में लॉन्च किया गया था और इसका प्रबंधन इफको द्वारा किया जाता हैं इसका उद्देश्य भारतीय किसानों को उनकी आवश्यकताओं से संबंधित जानकारी के जरिये निर्णय लेने में मद्द करना है। उपयोगकर्ता प्रोफाइल में चयनित सामग्री में पाठ, कल्पना, ऑडियो और वीडियो के रूप में कृषि सलाहकार, मौसम, बाजार मूल्य, कृषि सूचना पुस्तकालय सहित कई विविध जानकारी पूर्ण मॉड्यूल तक पहुंच सकते है। किसान कॉल सेंटर सेवाओं के संपर्क में आने के लिए ऐप भी हैल्पलाइन नंबर प्रदान करता है।

ई–राष्ट्रीय कृषि बाजार (ई–एन.ए.एम.)

यह इलेक्ट्रोनिक ट्रेडिंग पोर्टल है, जो मौजूदा एपीएमसी मंडियों को कृषि वस्तुओं के लिए एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार बनाने के लिए नेटवर्क बनाता है। यह पोर्टल सभी एपीएमसी संबंधित सूचनाओं और सेवाओं के लिए एकल खिडकी सेवा प्रदान करता है। इसमें कमोडिटी आगमन और कीमतें, व्यापारिक प्रस्तावों को खरीदने और बेचने, अन्य सेवाओं के बीच व्यपार प्रस्तावों का जवाब देने के प्रावधान शामिल है। ऑनलाइन बाजार लेनदेन लागत और सूचना विशमता को कम करता है। राज्यों द्वारा कृषि विपणन नियमों के अनुसार कृषि विपणन का संचालन किया जाता है, जिसके तहत राज्य को कई बाजार क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है इनमें से प्रयेक को एक अलग कृषि उतपाद विपणन समिति एपीएमसी द्वारा प्रशासित किया जाता है। एकीकृत बाजार में प्रक्रियाओं को व्यवस्थित करने के अलावा यह खरीदों और विक्रेताओं के बीच असंतुलन को दूर करता है। यह वास्तविक समय और मूल्य की खोज को बढावा देता है, वास्तविक मांग और आपूर्ति, नीलामी प्रक्रिया में पारदर्शिता को बढावा देता है। और किसानों के लिए एक राष्ट्रव्यापी बाजार उपलब्ध करवाता है।

आरएमएल किसान या कृषि मित्र

यह भी एक तरह का कृषि ऐप है, जहां किसान नवीनतम वस्तुए और मंडी की कीमतों, कीटनाशकों और उर्वरक, खेत और किसान संबंधी समाचारों का सटीक उपयोग, मौसम पूर्वानुमान और सलाहकार के साथ काम कर सकते है। यह सरकार की कृषि नीतियों और योजनाओं के बारें मे कृषि

सलाह और समाचार भी प्रदान करता है। उपयोगकर्ता 450 से अधिक फसल किस्मों, 1,300 मंडियों और 3,500 मौसम स्थानों को 50,000 गांवो और 17 राज्यों में से चुन सकते है। यह खेती की आदतों के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी देने या प्रदान करने के लिए डिजाइन किए गए विशिष्ट उपकरणों की सहायता से काम करता है। उदाहरण के लिए यह किसानों को सही समय पर उनकी फसलों को प्रभावित करता है। फार्म न्यूट्री सामान्य और व्यक्तिगत पोषक तत्वों की सिफारिशें प्रदान करता है, जो कि उर्वरक खुराक के समय के रूप में प्रस्तुत की जाती है।

पूसा कृषि

यह ऐप सन् 2016 में केन्द्रीय कृषि मंत्री श्री राधा मोहन सिंह जी द्वारा शुरू किया गया था और इसका उद्देश्य भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आई.ए.आर.आई.) द्वारा विकसित प्रौद्योगिकीयों के बारे में जानकारी पाने के लिए किसानों की मदद करना है। जिससे किसानों को आय या रिटर्न बढाने में मदद मिलेगी ऐप भी किसानों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) द्वारा विकसित फसलों की नई किस्मों से संबंधित जानकारी प्रदान करता है। खेती के साथ–साथ कृषि मशीनरी और इसके कार्यान्वयन से किसानों को रिटर्न बढाने में मदद मिलती है।

भारतीय कृषि में क्रांति लाने वाले ऐप्स

वर्ष 2015 में, भारत में 720 मिलियन मोबाइज फोन उपयोगकर्ता थे जिनमें से 320 मिलियन ग्रामीण मोबाइल फोन उपयोगकर्ता है। इस अनुमान में इंटरनेट सुविधा के साथ 50 मिलियन स्मार्टफोन उपयोगकर्ता भी शामिल है। 2015 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा डिजिटल इंडिया लॉन्च किया गया इसका लक्ष्य भारत में डिजिटल साक्षरता को बढावा देना और ग्रामीण समुदायों को सशक्त बनाने के लिए डिजिटल बुनियादी ढांचे का निर्माण करना है हम जानते है कि हमारे देश के 58 प्रतिशत ग्रामीण परिवार कृषि पर निर्भर है और अपनी आजीविका कृषि आधारित है। यह ध्यान में रखते हुए उनकी आजीविका के सबसे प्रमुख स्त्रोत के रूप में डिजिटल कृषि भूमिका को डिजिटल भारत में माना जा रहा है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का सपना 2022 तक भारतीय किसानों की आय को दोगुना करने के लिए डिजिटल इंडिया में डिजिटल कृषि का बहुत योगदान होगा। इसके लिए हमारे किसानों को भी स्मार्ट बनाना पड़ेगा ताकि हर नवाचार को अपना सके इन सबको संभव करने के लिए मोबाइल ऐप्स और सॉफ्टवेयर बहुत जरूरी है।

कृषि विपणन के विभिन्न क्षेत्रों में मोबाइल फोन का उपयोग

- बाजारों तक लंबी दूरी का यात्रा करने से पहले मोबाइल फोन फसलों की कीमतों के बारे में नवीनतम जानकारी प्रदान करते है। इससे किसानों का समय और पैसे की बचत होती है।
- मोबाइल फोन यह सुनिश्चित करते है कि किसान, व्यापारियों के साथ सौदे की बातचीत कर सकते है और बाजार में फसल लाने के अपने समय में सुधार कर सकते है।
- मोबाइल तकनीक हमारे किसानों को महत्वपूर्ण मौसम के आंकडों को समय पर प्रदान करती है। ताकि वे अपने फसलो को ठीक से प्रबंधित कर सकें उसके अनुसार बाजार में ले जा सकें और फसल का उचित मूल्य प्राप्त कर सकते है।
- मोबाइल तकनीक, किसानों को सूचना का एक पैकेज देती है जो उनकी उत्पादन और जरूरतों की प्राथमिकताओं को पूरे चक्र में बदलता रहता है।
- व्यापारियों और उत्पादकों के बीच सूचनाओं की असमानताओं को कम करने लेन–देन की लागत कम करने किसानों की उत्पादन की रणनीतियों को ठीक करने की क्षमता को बढाने के लिए और उपभोक्ता मांग और विपणन चैनलों में बदलाव की गति को तेज करने के लिए मोबाइल फोन किसानों की बहुत सहायता करता है।
- खेतों और अन्य ग्रमीण व्यवसायों से आय में सुधार लाने और व्यापार भागीदारों के साथ विश्वास बनाने के लिए मोबाइल फोन का इस्तेमाल किया जाता है। इससे किसानों और व्यापारियों के बीच अच्छे रिस्ते बन जाते है जो उनको भविष्य में सहायता करते है।
- मोबाइल फोन अभिनव साझेदारी जिसे हम इन्नोवेटिव पार्टनरशिप भी कहते है। बनाने में मददगार है यह निगमों और व्यापारियों के साथ सीधे संचार की सुविधा प्रदान करता है। समय–समय पर उत्पाद की आपूर्ति करने की क्षमता के माध्यम से आवश्यकताओं के आधार पर आपूर्तिकर्ता या सप्लायर्स रियल–टाइम रिसर्च करने के लिए मोबाइल फोन का उपयोग कर सकते है मोबाइल के माध्यम से बहुत कम समय में किसान और व्यपारी सड़क पर खड़े–खड़े पूरे ट्रक लोड को खरीद और बेच सकता है।
- मोबाइल फोन के माध्यम से किसान और व्यापारी माल ढुलाई जैसे उत्पाद संग्रह, वितरण और सुरक्षा के संचालन की निगरानी और समन्वय को बड़ा सकते है।
- किसानों को मोबाइल फोन के माध्यम से मौजूदा भंडारण, पैकेजिंग, परिवहन और प्रसंस्करण सुविधाओं के अधिक कुशल उपयोग की सुविधा मिलती है।

❋❋❋

आलू में लगने वाले रोग एवं प्रबन्धन

अंकित सिंह, रीशू सिंह एवं एन. आर. मीना
नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

आलू फसल की कुछ बीमारियाँ ऐसी हैं जिनके जीवाणु मिट्टी में काफी लंबे समय तक जीवित रहते हैं। यह जीवाणु कन्द को नुकसान पहुंचाते हैं तथा ऐसे रोगग्रस्त कन्दों के द्वारा ये बीमारियाँ अन्य क्षेत्रों व रोग मुक्त खेतों में चली जाती हैं। इनमें से प्रमुख रोगों और उनके प्रबंधन पर यहाँ संक्षेप में चर्चा की गई है।

अगेती झुलसा

यह एक फफूंद जनित रोग है इसमे पत्तियों के ऊपर छोटे हल्के भूरे रंग कें धब्बे दिखाई देते है। फफूंद सबसे पहले नीचे की पुरानी पत्तियों को संक्रमित करता है बाद में यह रोग ऊपर की पत्तियों को संक्रमित करता है। पुराने धब्बे छल्लेदार दिखायी पडतें हैं। रोग की उग्र अवस्था मे यह धब्बे आपस में मिलकर पूरी पत्ती को झुलसा देते हैं। आलू की अगेती फसल में इस रोग की सम्भवना सबसे अधिक रहती हैं।

प्रबन्धन

इसकी रोकथाम के लिए मैकोजेब (75 डब्ल्यू. पी. 2–2.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर अथवा कापर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू. पी. की 3 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के दर से 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव करें। आवश्यकता पडने पर 15 दिनो के अन्तराल पर दूसरा एवं तीसरा छिडकाव करें।

पछेती झुलसा

यह एक भयानक रोग है जो फफूँद द्वारा होता है। इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियो के किनारो व सिरे से झुलसना प्रारम्भ होती है। जिसके परिणाम स्वरूप बाद में पूरा पौधा झुलस जाता हैं और पत्तियों पर भूरे रंग के जलीय धब्बे बनते हैं जो अन्ततः पत्ती को झुलसा देता हैं। रोग की उग्र अवस्था होने पर तने पर भी भूरे व काले धब्बे दिखायी देते हैं जिससे कन्द भी प्रभावित होते है। बदली के मौसम तथा वातावरण में नमी होने पर यह रोग उग्र रूप धारण कर लेता है, तथा दो–तीन दिन में पूरी पत्तियाँ झुलस जाती हैं बाद में पत्ती तना एवं आलू सडने लगते हैं।

प्रबन्धन

- इण्डोफिल एम–45 की 2–2.5 कि.ग्रा. मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से पहला छिड़काव दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में करे। दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह से जनवरी माह तक हल्की बारिश या बदली होने पर कवकनाशी का प्रत्येक दस से पन्द्रह दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार 3 छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव इस प्रकार करना चाहिए कि कवकनाशी पत्तियों की दोनो सतहो पर समान रुप से फैल जाय।
- रोग ग्रसित कन्दो की बुवाई न करे। सड़े, गले, कटे आलू छांट कर अलग कर लें।
- रोग की उग्र अवस्था में रिडोमिल एम–जेड 2.5 कि.ग्रा. को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

काली खुरन्ड

इस रोग से ग्रसित कंदो के ऊपर काली खुरदरी परत जम जाती है। सबसे पहले कन्दो के ऊपर लाल भूरे धब्बे वाली आकृति बनती है जो सूख कर खुरदरी प्रतीत होती है।

प्रबन्धन

- बुवाई से पहले आलू को बोरिक अम्ल में 30 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोल बनाकर करीब 30 मिनट तक डुबोयें और इसके बाद छाया में सूखा कर खेत में बुवाई करे। ऐसा करने से काफी हद तक इस रोग से निजात मिल जाती है।
- प्रभावित कन्दो का उपयोग बीज के लिए न करें।
- जिस खेत में यह रोग लगता हो उसमें कम से कम तीन से चार वर्ष का फसल चक्र अपनायें।

शाकाणु मृदुगलन

शाकाणु मृदुगलन से प्रभावित पौधो की जड़ तथा तना भूमि स्तर पर जलीय, चिपचिपे धब्बे युक्त होकर सड़ जाते है कन्द में सड़न के कारण झाग एंव गंध आती है। इसका प्रकोप खेत से भण्डार ग्रह तक बना रहता है।

प्रबन्धन

इस रोग से बचने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 100 मि.ग्रा. प्रति ली. पानी के घोल बनाकर 30 मिनट तक कन्दो को डुबोकर उपचारित करें तथा खड़ी फसल पर ट्राइडेमेफान 0.05 प्रतिशत तथा एग्रीमाइसिन के 100 मि.ग्रा. प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तर पर बारी–बारी से छिड़काव करने से इस रोग से निजात पायी जा सकती है।

विषाणु रोग

इस रोग से प्रभावित पौधो की पत्तियां मुड़ जाती है, तथा मोटी एंव कड़ी हो जाती है। पौधो की बढवार् रुक जाती है अर्थात पौधे बौने रह जाते है। मुख्य रुप से यह बीमारी माहू कीट से फैलती है।

प्रबन्धन

- विषाणु रहित स्वस्थ आलू की बुआई करें।
- माहू कीट के नियंत्रण के लिए फोरेट 10 जी 10 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर बुवाई के समय या फसल पर मिट्टी चढ़ाते समय खेत में डालें। इसके अलावा एक छिड़काव मेंटासिस्टाक्स 1.5 ली को 1000 लीटर पानी में घोलकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करे।

पोषक तत्वों से भरपुर क्विनोआ की उन्नत खेती

सुरेन्द्र कुमार, प्रियंका एवं सरिता
कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

अमेरेंथेसी कुल की यह फसल वानस्पतिक रूप से चीनोपोडियम क्विनोआ नाम से जानी जाती है। इस महत्वपूर्ण फसल की खेती पिछले हजारों वर्षो से एंडियन क्षेत्र में की जा रही है। यह एक वर्षीय, गहरी जड़ो वाला, 1–2 मीटर लम्बा पौधा है जिसकी खेती समुद्र तल से 3800 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में की जा सकती है। क्विनोआ लवणता, पाला तथा सूखा सहन करने की असीम क्षमता रखने वाला पौधा है। इसकी खेती कम उपजाऊ मृदा में आसानी से की जा सकती है। क्विनोआ का बीज छोटा, चपटा व अंडाकार आकार का सामान्यतः हल्का पीला, गुलाबी, लाल या काले रंग का होता है।

पोषक तत्व : क्विनोआ में पाया जाने वाला आवश्यक अमीनों अम्लों का आदर्श संतुलन इसके पोषणमान के प्रभाव मूल्य को दर्शाता है। यह विटामिन तथा विभिन्न प्रकार के खनिज लवणों से परिपूर्ण खाद्यान है। इसमें पाए जाने वाले प्राकृतिक प्रतिउपचारक जैसे α व γ टोकोफेरोल तथा अन्य द्वितीयक उपापचयक प्रदार्थ इसकी औषधीय उपयोगिता को दर्शाते हैं।

उपयोग : सामान्यतया क्विनोआ का उपयोग दलीया बनाने, शोरबे को गाढ़ा करने तथा उबाल कर सलाद में मिलाने के रूप में किया जाता है। इसका उपयोग अंकुरित बीजों के रूप में, आटा बनाने में तथा पोपकोर्न के रूप में भी किया जाता है। बच्चों के लिए यह एक पौष्टिक खाद्यान है। ओर यह बिस्किट, ब्रेड और परिष्कृत खाद्य प्रदार्थ बनाने में भी उपयोगी है।

उन्नत किस्में : वैश्विक स्तर पर क्विनोआ की बहुत सी विकसित किस्में हैं परंतु नई फसल होने के कारण हमारे देश में वर्तमान समय तक क्विनोआ की कोई भी विकसित किस्म नहीं है। हालाँकि क्षमतावान फसलों पर अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान तंत्र परियोजना के अंतर्गत कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर तथा देश के विभिन्न अनुसंधान संस्थान इस दिशा में प्रयाशरत है। कृषि अनुसंधान केंद्र, मंडोर द्वारा विगत कुछ वर्षो से क्विनोआ के जनर्न्द्यों का परीक्षण किया जा रहा है।

जलवायुवीय परिस्थितियाँ : यह फसल -4 से -38 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान तथा 40 – 88 प्रतिशत सापेक्षिक आद्रता वाली परिस्थितियों में भी बेहतर निष्पादन दर्शाती है। यह फसल 100 – 200 मिमी. वर्षा वाले क्षेत्रों में, संरक्षित नमी में भली–भाँति उगाई जा सकती है।

मृदा व खेत की तैयारी : क्विनोआ की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। यहाँ तक की कम उर्वर, निम्न पी. एच. मान व निम्न नमी धारण क्षमता युक्त मृदा में भी इसकी खेती संभव है। परंतु बेहतर निष्पादन व उत्पादन हेतु उत्तम जल निकास वाली कार्बनिक प्रदर्थ युक्त दोमट मृदा जिसका पी. एच. मान 6-0 – 8-0 के मध्य हो में इसकी खेती सर्वाधिक उपयुक्त है। बुवाई पूर्व खेत को अच्छी तरह से तैयार कर भुरभुरा व खरपतवार रहित बना लेवें।

बीज की मात्रा व बुवाई : क्विनोआ की कतार में बुवाई हेतु 5–6 किग्रा. तथा छिटकवा विधि से बुवाई हेतु 6–8 किग्रा. बीज प्रायप्त होता है। भली–भाँति तैयार खेत में इसकी बुवाई का उपयुक्त समय नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा है। बुवाई के समय विशेष रूप से ध्यान रहे की कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. हो। बीज को 2–3 सेमी. से अधिक गहरा न बोयें।

खाद व उर्वरक : क्विनोआ एक कम निवेश चाहने वाली फसल है। इसमें अत्यधिक खाद व उर्वरक की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी बेहतर उत्पादन हेतु बुवाई पूर्व 6–8 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में डाली जा सकती हैं। इसके अतिरिक्त मृदा की स्वास्थ्य जांच उपरांत आवश्यकतानुसार सामान्य मात्रा में नत्रजन व फास्फोरस देवें।

सिंचाई व जल निकास : इस फसल की खेती के लिए अत्यधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है यह 100–200 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में बिना सिंचाई आसानी से उगाई जा सकती है। हालांकि जल की उपलब्धता होने पर 2–3 सिंचाई देवें तथा जल निकास का विशेष ध्यान रखें।

निराई व गुड़ाई : क्विनोआ में बढ़वार की प्रारम्भिक अवस्था में खेत को खरपतवारों से अवश्य मुक्त रखें । इस हेतु पहली निराई, बुवाई के 20–25 दिनों उपरांत तथा दूसरी निराई पुष्पक्रम दिखने की अवस्था पर 40–45 दिन उपरांत करें। बेहतर वायु संचार हेतु निराई उपरांत हल्की गुड़ाई अवश्य करें।

कटाई व उपज : परिपक्वता के समय सिट्टे हल्के गुलाबी से हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। मुख्य सिट्टे व प्राथमिक शाखाओं पर लगे सिट्टों की परिपक्वता में थोड़ा अंतर होता है अतः सभी सिट्टों के समान रूप से पक जाने की स्थिति में कटाई करें । देरी से कटाई करने पर दाना झड़ने की समस्या होती है। सामान्य परिस्थिति में क्विनोआ का उत्पादन प्रति हेक्टेयर 15–20 क्विंटल होता है लेकिन बेहतर प्रबंधन गतिविधियां अपनाकर प्रति हेक्टेयर 25–30 क्विंटल क्विनोआ उत्पादित किया जा सकता है।

तलिका 1 : क्विनोआ का पौष्टिक मान (मि.ग्रा./100 ग्राम)

कैलोरी	369
प्रोटीन	14.11
कुल वसा	6.07
कार्बोहाइड्रेट	64.2
रेशा	7.11
कैल्शियम	46.67
लोहा	4.58
मैगनीशियम	2.02
फास्फोरस	458
पोटाश	562
सोडियम	4.44
जिंक	3.11
तांबा	0.60
विटामिन सी	0.10
थायमीन (बी 1)	0.36
रायबोफ्लेविन (बी 2)	0.31
नियासिन (बी 3)	1.51
पेंटोथिनिक (बी 5)	0.78
विटामिन बी 6	0.49
फोलेट (बी 9)	184.44

मैथी उत्पादन की उन्नत तकनीक

मंजू मीणा, किरन मीणा, आर. के. मीणा एवं एम. सी. जैन
कृषि अनुसंधान केन्द्र एवं कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा (राज.)

भारत में उगाये जाने वाले बीजीय मसालों मे मैथी का मुख्य स्थान हैं। मैथी लेग्युमिनेसी कुल के पैपिलियोनेसी उपकुल के अन्तर्गत आने वाला एक वर्षीय शाक है। यह दो प्रकार की होती है। साधारण मैथी (*ट्राइगोनेला फोइनम–ग्रेइकम*) एवं कसूरी मेथी (*ट्राइगोनेला कार्निकुलाटा*)। इन दोनों प्रकार की मेथी के पौधों की बनावट, वृद्धि तथा उपज में कुछ भिन्नता होती है। यह एक बहुउद्देश्य दलहनी फसल है जिसकी पत्तियों का उपयोग सब्जियों तथा दानों का उपयोग मसालों और ओषधियो में किया जाता है। इसके बीजों में मूत्रवर्धक, शक्तिवर्धक, वायुनाशक, पोषक व कामोद्दीपक शक्ति पायी जाती है। इसके अतिरिक्त हृदयरोग, पेट की बीमारियों आदि के निदान में मेथी का उपयोग सार्थक सिद्ध पाया गया है। इसके दानों में 'डायोस्जेनिन' नामक स्टेरोइड पाया जाता है, जो सेक्स हार्मोन व गर्भ निरोधक दवाओं में प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त दलहनी फसल होने के कारण मेथी वायुमण्ड़ल से नत्रजन भूमि मे स्थिर कर भूमि की उर्वरा शक्ति मे वृद्धि करती हैं। अतः इस फसल को दूसरी फसलों के साथ फसल चक्र में हरी खाद के रूप में भी उगाया जाता है। मेथी के बीजों में मुख्य तौर से वाष्पशील व स्थिर तेल, प्रोटीन, सैलूलोज, स्टार्च, शर्करा, म्यूसिलेज, खनिज, एल्कोलायड व विटामिनस पाये जाते हैं। बीजों का गंधकयुक्त कड़वा स्वाद इसमें पाये जाने वाले 'ओलियारेजिन' के कारण होता है। दानों के रासायनिक विश्लेषणों से वैज्ञानिकों ने पाया कि इसके दानों में नमी 6.3 प्रतिशत, प्रोटीन 9.5 प्रतिशत, वसा 10 प्रतिशत, क्रूड रेशा 18.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेड 42.3 प्रतिशत एवं 13.4 प्रतिशत राख तथा इसमे म्यूसिलेज (28%), ट्राइगोनेलाइन (0.13-13-30%), सैपोनिन (1-7%) और कैलौरीमान (370 कैलौरी प्रति 100 ग्राम बीज) पाये जाते है। इसके बीजों में 0.02 से 0.25 प्रतिशत वाष्पशील तेल पाया जाता है। मेथी की पत्तियों में खनिज, प्रोटीन एवं विटामिन प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

देश की मेथी का 80 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र व उत्पादन अकेले राजस्थान राज्य में होता है। अतः इसे ''मेथी का कटोरा '' (Fenugreek bowl of the country) नाम से भी जाना जाता हैं तथा नागौर, उदयपुर, कोटा, बूंदी, झालावाड और आसपास के क्षैत्रो मे बहुतायत से उगायी जाती है। इसकी खेती 1.9 लाख टन उत्पादन के साथ 1.57 लाख हेक्टर से अधिक क्षैत्र मे की जाती हैं। देश मे इसकी खेती को बढ़ावा देना एवं उत्पादकता बढ़ाने की जरूरत हैं। मेथी की अच्छी पैदावार के लिये उन्नत किस्मों के प्रयोग के साथ – साथ वैज्ञानिक विधि से खेती करना भी अतिआवश्यक हैं। इसके लिये उन्नत सस्य कियाओं को ध्यान मे रखना चाहिए।

उपयुक्त जलवायु व भूमि : मेथी एक शीत जलवायु की फसल हैं। इसकी खेती उत्तर भारत में रबी मे की जाती हैं तथा यह पाले के प्रति काफी सहनशील होती हैं। मेथी की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जाती है। दोमट मटियार से दोमट बलुई मिट्टी इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम मानी गयी है। अच्छे जल निकास व पर्याप्त जैविक पदार्थो वाली दोमट मिट्टी में इसकी खेती सफलता पूर्वक की जा सकती हैं। अच्छी खेती के लिये भूमि का पी.एच.मान 6 से 7 एवं तापमान 10-15 0^{c} उपयुक्त होता हैं।

भूमि की तैयारी : अच्छी फसल के लिये खेत को भली–भांति तैयार करना चाहिए। भारी मृदा में देशी हल से 3–4 व हल्की मृदा में 2–3 जुताई पर्याप्त है। जुताई के तुरन्त बाद पाटा चलावे जिससे मिट्टी बारीक व भुरभुरी हो जावें। तैयार खेत को सिंचाई की सुविधानुसार छोटी – छोटी क्यारियों में बांट देना चाहिए साधारणतः 5–7 मीटर लम्बी व 2 से 3 मीटर चौड़ी क्यारियॉ बनानी चाहिए। सिंचित क्षेत्रों मे पट्टीदार क्यारियॉ बनाकर इसकी खेती की जा सकती है। दीमक एवं भूमिगत कीटों का समस्या होने पर इनकी रोकथाम के लिये अन्तिम जुताई के समय 25 किलोग्राम एण्डोसल्फॉन 4 प्रतिशत या मिथाइल पेराथियॉन 2 प्रतिशत प्रति हेक्टर की दर से भूमि में मिला देना चाहिए।

उन्नत किस्में : राजस्थान राज्य से मेथी की विभिन्न उन्नत किस्में विकसित की गई हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार से है :

- **आर.एम.टी 1 :** राजस्थान के सभी भागों के लिये अनुमोदित यह किस्म मध्यम कद तथा आकर्षक, चमकीली पीले दाने वाली है। यह 140 – 150 दिन में पककर औसतन 14 क्विंटल प्रति हेक्टर की उपज देती है। यह किस्म जड़ – गलन एवं छाछ्या रोग से मध्यम प्रतिरोधी है।

- **आर.एम.टी 143 :** इस किस्म के दाने बड़े एवं आकर्षक पीले रंग के होते है। इस किस्म की औसत उपज 16 क्विंटल प्रति हेक्टर होती हैं। छाछ्या रोग से प्रतिरोधी यह किस्म 140–150 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह किस्म विशेष रूप से राजस्थान राज्य के भीलवाड़ा, झालावाड़ एवं जोधपुर जिलों के लिये उपयुक्त है।

- **आर.एम.टी 303 :** यह किस्म 120 – 125 दिन में पक कर तैयार होकर औसतन उपज 19 क्विंटल प्रति हेक्टर देती है। इसके दाने बड़े एवं आकर्षक पीले रंग के होते है। यह छाछ्या रोग से मध्यम प्रतिरोधी हैं।

- **राजेन्द्र कांति :** मध्यम आकार के झाड़ीदार पौधे (जल्दी परिक्वता के औसतन उपज 13 क्विंटल प्रति हेक्टर देती है। खरीफ और रबी

दोनों मौसमों मे अंतरफसल के लिए उपयुक्त, सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट, पाउडरी मिल्ड्यू और एफिडस के लिए प्रतिरोधी है।

- **आर.एम.टी 351 :** यह किस्म 140 – 150 दिन में पक कर तैयार होती है। इसके पौधे मध्यम छोटे एवं दाने बड़े एवं आकर्षक पीले रंग के होते है। सामान्य परिस्थितियों में इस किस्म की औसत उपज 18 क्विंटल प्रति हेक्टर पाई गई है। इसमें प्रमुख कीट एवं रोगों के प्रति प्रतिरोधी क्षमता अनुमोदित किस्म आर.एम.टी.1 से अधिक पायी गई है।

- **आर.एम.टी 305 :** यह पहली ससीमाक्ष प्रकार की बौनी किस्म है। जल्दी पकने वाली इस किस्म में फलियाँ एक साथ परिपक्व होती हैं। यह किस्म 120–130 दिन में पककर औसतन 18 क्विंटल प्रति हेक्टर की उपज देती है। यह चूर्णिल फफूंद रोग तथा मूलगाँठ सूत्रकृमि के प्रतिरोधी है।

- **पूसा कसूरी :** यह छोटे दाने वाली किस्म हैं। इसकी खेती हरी पत्तियों के लिये की जाती हैं। इसकी पत्तियों की 5–7 कटाईयां कर सकते हैं। इसके दानों की औसत उपज 5–7 क्विंटल प्रति हेक्टर तक प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान में देश के विभिन्न राज्यों से मेथी की अच्छी पैदावार के लिये विभिन्न उन्नत किस्में विकसित की गई हैं जिनमें आर.एम.टी 361, सी.ओ. 1, राजेन्द्र क्रांति, लाम सेलेक्शन 1, एच. एम. 103, हिसार सोनाली हिसार सुवर्णा, हिसार माधवी व हिसार मुक्ता प्रमुख हैं।

बीज व बुवाई : मेथी की बुवाई अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जाती है। कसूरी मेथी की बुवाई दिसम्बर के मध्य में की जाती है। पर्वतीय क्षेत्रों में दोनों प्रकार की मेथी (साधारण व कसूरी) की बुवाई बसन्त (मार्च) में की जाती है। देर से बुवाई करने से फसल मे कीट व बीमारियो मुख्यत चैंपा तथा चूर्णित फफूंद का प्रकोप बढ़ जाता हैं। पछेती फसल मे पकनें की अवस्था में तापमान अधिक होने के कारण फसल शीघ्र पक जाती हैं तथा उपज मे कमी आ जाती हैं। साधारण मेथी की बुवाई के लिये 20–25 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टर की आवश्यकता होती है जबकि कसूरी मेथी के लिए प्रति हेक्टर 10 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त रहता हैं। बुवाई से पूर्व बीज को 3 ग्राम थायरम या 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम या 4–6 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। अधिक उत्पादन के लिये बीजों को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना लाभदायक होता हैं। बीजो को छिडकवा विधि से बुवाई करके मिट्टी से हल्का ढ़क देते है तथा क्यारियॉ बना देते हैं। कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. रखनी चाहिए जिससे पौधों की वृद्धि के प्रारम्भिक अवस्था में निराई–गुड़ाई में सुविधा रहेगी तथा बीजों की गहराई 5 से.मी. से अधिक नहीं रखनी चाहिए। कसूरी मेथी के लिये बीज की गहराई 2 से.मी. रखनी चाहिए अन्यथा बीज जमाव प्रभावित होने की संभावना रहती है।

खाद एवं उर्वरक : शीघ्र वृद्धि एवं अधिक उपज के लिए खेत की तैयारी के समय 15 – 20 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टर की दर से डालें। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग मृदा परिक्षण के आधार पर करना चाहिए। फिर भी क्षेत्रीय सिफारिसनुसार 40 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टर की दर से प्रयोग करे। नत्रजन की आधी मात्रा व फॉस्फोरस की पुरी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष नत्रजन की आधी मात्रा प्रथम सिंचाई के समय खड़ी फसल मे प्रयोग करना चाहिए।

निराई – गुडाई व खरपतवार नियंत्रण : फसल को खरपतवारों से मुक्त रखने के लिये एवं मृदा में उचित वायु संचार बनाए रखने के लिये दो निराई – गुड़ाई की आवश्यकता होती हैं। प्रथम निराई – गुडाई बुवाई के 30–35 दिन पर करनी चाहिए। पौधों की छंटाई भी कर देनी चाहिए। आवश्यक हो तो दूसरी निराई – गुडाई बुवाई के 50–55 दिन बाद करे। खरपतवार नियंत्रण हेतु फ्लोक्लोरेलिन 0.75–1.0 कि.ग्रा. या पेन्डीमेथेलिन 0.75 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टयर की दर से 500–650 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई से पूर्व छिड़ककर मिट्टी में मिला देना चाहिए।

सिंचाई प्रबन्धन: बुवाई के तुरन्त पश्चात् हल्की सिंचाई करें। फिर आवश्यकतानुसार 15–20 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई की संख्या मृदा की संरचना व वर्षा पर निर्भर करती है। अच्छी जलधारण क्षमता वाली भूमि में 2–3 व हल्की जमीन में 4–5 सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल मे प्रथम सिंचाई 30–40 दिन बाद, शाखा निकलते समय, फूल आने के समीप तथा बीज बनने के समय करना लाभप्रद रहता है। फसल में फलियों व बीजों के विकास के समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। मेथी की अधिक कटाई लेने के लिये अधिक सिंचाई (विशेषत: कसूरी मेथी में) करनी चाहिए।

पौध सरंक्षण : मेथी की फसल में विभिन्न कीटों एवं व्याधियों का प्रकोप होता है जिनका सही समय पर नियंत्रण करना आवश्यक है अन्यथा फसल की उपज एवं गुणवत्ता में प्रतिकुल प्रभाव पड़ता है।

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

मोयला : मेथी में रसचूसक कीटों में काला मोयला प्रमुख है। इस कीट का आक्रमण फूल आने से दाना पकने तक रहता है। यह कीट पौधों के कोमल भागों से रस चूसता है जिससे पौधे पीले पड़ने लगते है। रोगग्रस्त पौधों की बढ़वार रूक जाती है व उनमें फलियां एवं दाने कम व निम्न गुणवत्ता के बनते हैं। इसके नियंत्रण हेतु डाइमिथोएट (30 ई.सी.) या मेलाथियॉन (50 ई.सी.) मे से किसी एक का 0.03 प्रतिशत का प्रति हेक्टर 500 से 600 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता होने पर 10–15 दिन के अन्तराल पर पुन: छिड़काव करें।

फली भेदक : इसके नियंत्रण हेतु क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 1.25 लीटर या क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 1.5 लीटर को प्रति हेक्टर 500–600 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करे।

प्रमुख व्याधियाँ एवं रोकथाम

छाछ्या, चूर्णिल/आसिता रोग (पाउडरी मिल्ड्यू) : इस रोग के प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की पत्तियों पर सफेद चूर्ण पुंज दिखाई देते हैं जो उग्र रूप में पूरे पौधे को सफेद चूर्ण के आवरण से ढक देते हैं। रोग प्राय ठण्ड के मौसम के अन्त मे दिखता है फलियों के लगने के समय गम्भीर रूप धारण कर लेता है। सुखे मौसम मे यह तेज गति से फैलता है। इसकी रोकथाम हेतु फसल पर रोग के लक्षण दिखाई देते ही सल्फर चूर्ण 20–25 किलो प्रति हेक्टर बुरकाव या घुलनशील गंधक 2 कि.ग्रा. या केराथेन एल.सी का 600–800 मि.ली. 500–600 लीटर पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करे। आवश्यकतानुसार छिड़काव को 10–15 दिन बाद दोहरावें।

तुलासिता (डाउनी मिलड्यू) : यह रोग सामान्यतः दिसम्बर–फरवरी माह में पौधों पर दिखाई देता है। इसमें पत्तियों की ऊपरी सतह पर पीले धब्बे दिखाई देते हैं व नीचे की सतह पर काले भुरे रंग के फफूंद की वृद्धि दिखाई देती है। इसके अधिक प्रकोप से ग्रसित पत्तियाँ झड़ जाती है तथा उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही तांबा युक्त फफूंद नाशी या मेन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार छिड़काव को 10–15 दिन बाद दोहरावें।

जड़गलन : इस रोग से पुराने पौधों की अपेक्षा नये पौधे अधिक संवेदनशील होते हैं। यह रोग अधिकांशतः आरंभिक अवस्था में अधिक लगता है। रोग की अधिकता जलप्लावन स्थिति में अधिक होती है। इस रोग से जड़ की बढ़वार कम होती है एवं अन्त में जड़ सड़न के कारण नष्ट हो जाती है। ग्रसित पौधों की पत्तियाँ सूख जाती है एवं खींचने पर असानी से मृदास्तर से अलग हो जाती हैं। इस रोग का नियन्त्रण पूरी तरह संभव नहीं है फिर भी रोग के प्रकोप को निम्नलिखित उपायों से कम कर सकते है।

- गर्मियो में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।
- उचित फसल चक्र अपनाना कर।
- बुवाई से पूर्व बीजों को थाइरम या केप्टॉन 2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करना चाहिए।
- मृदा को नीम की खली 150 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर से तथा बीजों को ट्राइकोडर्मा मित्र फंफूद 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित कर रोग में कमी की जा सकती है।
- कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत से दो बार पौधों को पूर्ण भिगों कर तर करें। पहली रोग के प्रारम्भिक लक्षण के दौरान एवं दूसरी बार एक माह बाद।

पत्ती धब्बा : इस रोग के प्रथम लक्षण पौधों की पत्तियों व तनों पर बड़े – बड़े धब्बों के रूप में प्रकट होते है। ठण्डे एवं आद्र मौसम में रोग तेजी से फैलता है। रोगी पौधों की पत्तियाँ झड़ने लगती है तथा उपज में भारी कमी आ जाती है। इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही फसल पर मैन्कोजेब 2 ग्राम या कार्बेण्डाजिम 1 ग्राम/लीटर पानी मे घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिनों बाद छिड़काव को दोहरावें।

फसल को पाले से बचाव : फसल पर पाला पड़ने की संभावना पुष्प के समय एवं बीज बनते समय अधिक होती है पाले से फसल को निम्न में से कोई उपाय कर बचाया जा सकता है।

- फसल पर 0.1 प्रतिशत सांद्र गन्धक के तेजाब का छिड़काव करना चाहिए।
- हल्की सिंचाई करें।
- पाला पड़ने की आशंका के दिन आधी रात (2–4 बजे) अगर खेत में धुंआ किया जाये तो फायदा होता है।

कटाई एवं गहाई : इस फसल की विभिन्न किस्में लगभग 130–150 दिन में पककर तैयार हो जाती हैं। इस फसल मे बुवाई सें फूल आने तक 50–60 दिन का समय लगता है तथा फूल आने से पकने तक 80–90 दिन लगते है। जब पौधों की पत्तियाँ झड़ने लगें व पीली पड़ने लगे तब पौधों को दराती से काटकर खेत में छोटी – छोटी ढेरियों में रखना चाहिए। उपयुक्त समय पर कटाई करनी चाहिए नही तो दाने खेत में छिटक कर गिर जाते हैं। सूखने के बाद कूट कर दाने अलग कर लेने चाहिए। सब्जी के लिए हरी पत्ती के रूप मे मेथी की कटाई बुवाई के 30–35 दिन के बीच में 4–5 पत्तियो की अवस्था में जमीन से थोड़ी ऊँचाई पर करते है।

उपज : उन्नत किस्मों एवं कृषि तकनिकीयों को अपनाकर खेती की जाए तो सामानतय मेथी से 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। कसूरी मेथी से 6–8 क्विंटल प्रति हेक्टर उपज प्राप्त होती है।

भण्डारण : बीजो को पॉलीथिन पेपर से ढकी बोरीयों मे रखा जाता है। मैथी के बीजो की सफाई के लिए वैक्यूम ग्रेविटी सेपरेटर का उपयोग किया जाता है। साफ दानों को पूर्ण रूप से सुखाकर (8–10 प्रतिशत नमी) रहने पर साफ रेशे रहित बोरियों में भरकर हवादार नमी रहित गोदामों में रखना चाहिए।

❋❋❋

काला नमक चावल : गौतम बुद्ध से ऐतिहासिक जुड़ाव

नितिका कुमारी, सी. बी. मीणा एवं रवित साहू
कृषि महाविद्यालय, कोटा

काला नमक धान पारंपरिक फसलों की ही एक पुरानी किस्म है। काला नमक चावल की किस्म काला नमक 3131 व काला नमक केएन, अधिक पैदावार देने वाली किस्म है जो अधिक खुशबूदार व मुलायम है। काला नमक चावल अब सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में लोकप्रिय हो गया है। यह चावल अब बिक्री के लिए ऑनलाइन पोर्टल फ्लिपकार्ट पर उपलब्ध करा दिया गया है। हाल के वर्षो में इस चावल की विदेशों में भी मांग बहुत बढ़ गई है। यह सुगंधित चावल सेहत के लिए फायदेमंद है।

गौतम बुद्ध और काला नमक

काला नमक धान के बारे में कहा जाता है कि सिद्धार्थनगर के बजहा गांव में यह गौतम बुद्ध (300ई.पू.) के जमाने से पैदा हो रहा है और इसलिए इसे 'महात्मा बुद्ध का महाप्रसाद' भी कहते हैं। ऐसा माना जाता है की ज्ञान प्राप्ति के दिन सुजाता ने महात्मा बुद्ध को जो खीर भेंट की थी वह काला नमक चावल से बनी थी। भगवान बुद्ध काला नमक चावल की खुश्बू और स्वाद के दीवाने थे। इसका जिक्र चीनी यात्री फाह्यान के यात्रा वृतांत में मिलता है। इस धान से निकला चावल सुगंध, स्वाद और सेहत से भरपूर हैस ब्रिटिश काल में बर्डपुर, नौगढ़ व शोहरतगढ़ ब्लॉक में इसकी सबसे अधिक खेती होती थी। बस्ती, संत कबीरनगर, सिद्धार्थनगर, बहराइच, बलरामपुर, गोंडा, श्रावस्ती, गोरखपुर, देवरिया, कुशीनगर और महराजगंज जिलों को काला नमक का जीआई (geographical indication) टैग मिला है। ये जिले ही काला नमक चावल का उत्पादन और बिक्री दोनों कर सकते हैं। अन्य जिलों के लोग खाने के लिए उगा सकते हैं लेकिन काला नमक के नाम पर बिजनेस नहीं कर सकते। जीआई लेने के अलावा इस चावल का प्रोटेक्शन ऑफ प्लांट वैराइटी एंड फॉमर्स राइट एक्ट (PPVFRA) के तहत भी रजिस्ट्रेशन करवाया गया। काला नमक चावल के नाम का दूसरा कोई इस्तेमाल न कर सके।

कैसे पड़ा ये नाम ?

काला नामक चावल भारत के सबसे शानदार चावलों की किस्मों में से एक है। इसका नाम काला नमक चावल इसलिए पड़ा है क्योंकि इसका धान काले रंग का होता है यानी इसकी भूसी का रंग काला होता है। हालांकि, इसका चावल सफेद रंग का ही होता है। इस चावल से एक खुशबू भी आती है, जिसकी वजह से इसे यूपी का खुशबू वाला काला मोती (scented black pearl) भी कहा जाता है। अगर चावल की लंबाई को छोड़ दें तो ये सभी बासमती चावलों में सबसे महंगा है। इंटरनेशनल मार्केट में भी सबसे शानदार चावलों की गुणवत्ता मापने के जो पैरामीटर होते हैं, ये चावल उन सभी पर खरा उतरता है और अधिकतर बासमती चावल को पछाड़ता है।

सेहत के लिए फायदेमंद

इसमें आयरन और जिंक जैसे माइक्रो– न्यूट्रिएंट्स भरपूर मात्रा में होते हैं। ऐसे में आयरन और जिंक की कमी से जन्म से ही होने वाली बीमारियों का रिस्क इस चावल से काफी कम हो जाता है। जो लोग निरंतर काला नामक चावल खाते हैं, उनमें अल्जाइमर की बीमारी का खतरा बहुत ही कम हो जाता है। डायबिटीज के मरीजों को भी इससे फायदा होता है। इस चावल में एंथोसायनिन जैसे एंटीऑक्सिडेंट पाए जाते हैं, जो हृदय रोग की रोकथाम में सहायक होते हैं। यही नहीं इससे त्वचा के स्वास्थ्य की भी अच्छी देखभाल होती है।

'काला नमक' चावल किसानों के लिए क्यों फायदेमंद है ?

आजकल दुनिया जैविक खेती पर जोर दे रही है। 'काला नमक' चावल की विशेषता ये है कि यह सामान्यतौर पर जैविक खेती के जरिए ही उगाया जाता है। यानी धान की इस विशेष किस्म को बिना उर्वरकों और कीटनाशकों की मदद से ही उगाया जाता है और यह जैविक खेती के लिए पूरी तरह से उपयुक्त अति प्राचीन किस्म है। जाहिर है कि इसकी खेती में जब उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल ही नहीं होता तो किसानों की जेब का बोझ भी कम हो जाता है और उनकी फसल की लागत भी काफी कम हो जाती है। लेकिन, जहां तक पैदावार की बात है तो उसी इलाके में यह धान की दूसरी किस्मों से 40 से 50 फीसदी ज्यादा उपज देता है। इसकी एक और विशेषता ये है कि इसमें तने के सड़ने या भूरे धब्बे वाले रोग की शिकायत नहीं मिलती, जो धान की दूसरी फसलों में कभी–कभी किसानों के लिए बड़ा सिरदर्द बन जाते हैं। इस किस्म में अन्य चावल की किस्मों के अपेक्षा कम पानी लगता है। आम तौर पर एक किलो चावल के लिए करीब 3 से 4 हजार लीटर पानी का इस्तेमाल होता है, तो इस किस्म में 1 किलो चावल के उत्पादन के लिए करीब 1500 से 2500 लीटर पानी लगता है। काला नमक चावल की रोपाई जुलाई के प्रथम सप्ताह से अगस्त के दूसरे सप्ताह तक होती है और यह फसल नवंबर तक पूरी तरह से पककर तैयार हो जाती है।

स्ट्रॉबेरी का औषधीय गुण और स्वास्थ्य लाभ

गुंजन सनाढ्य, रूपसिंह एवं राकेश कुमार बैरवा
कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटा

स्ट्रॉबेरी का वानस्पतिक नाम *फ्रैगरिया आनासा* है। स्ट्रॉबेरी में अपनी एक अलग ही खुशबू के लिए पहचानी जाती है। जिसका फ्लेवर आइसक्रीम, कैंडी केक, मिल्कशेक, हैंड सैनिटाइजर, के रूप में जाता है। स्ट्रॉबेरी स्वाद में हल्का खट्टा और हल्का मीठा होता है. और इसका रंग चटक लाल होता है. ये मात्र एक ऐसा फल है। जिसके बीज बाहर की और होते है. स्ट्रॉबेरी की 600 किस्में इस संसार में मौजूद है. स्ट्रॉबेरी में कई सारे विटामिन और लवण होते है जो स्वास्थ के लिए काफी लाभदायक होते है। संयुक्त राज्य अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा स्ट्रॉबेरी उत्पादक है भारत में स्ट्रॉबेरी की खेती सतारा जिलें, पश्चिम बंगाल के कलिम्पोंग, बैंगलोर, नैनीताल और देहरादून में की जाती है। इनमें से, महाबलेश्वर, वाई और पंचगनी के सतारा जिले भारत में स्ट्रॉबेरी की 85 प्रतिशत खेती की जाती है। प्रकृति में पाए जाने वाले सबसे जीवंत और सुंदर दिखने वाले फलों में से एक, स्ट्रॉबेरी न केवल बेहद स्वादिष्ट है, बल्कि विभिन्न स्वास्थ्य लाभ गुणों से भी भरपूर है। इसका मोटा लाल रंग इसे स्वादिष्ट बनाता है और इस पर काले डॉट्स इसके पोषण मूल्य में इजाफा करते हैं। स्ट्रॉबेरी में कैलोरी की मात्रा कम होती है और इसे लो–कार्ब फलों के अंतर्गत वर्गीकृत किया जाता है। इसके अलावा, इसका जीआई मूल्य कम होता है विटामिन और खनिज स्ट्रॉबेरी में प्रचुर मात्रा में हैं। इस फल को खाने से आपको विटामिन ए, सी, फोलेट, फॉस्फोरस और मैंगनीज की अच्छी खुराक मिल सकती है। फोलिक एसिड नई कोशिकाओं के उत्पादन में मदद कर सकता है, जबकि विटामिन सी शक्तिशाली एंटीऑक्सिडेंट के रूप में कार्य करता है। यदि आप मध्य–भोजन के नाश्ते के रूप में 2–3 स्ट्रॉबेरी का सेवन करते हैं, तो भी आप अपनी दैनिक विटामिन सी आवश्यकता का एक अच्छा हिस्सा पूरा करेंगे। विटामिन सी न केवल प्रतिरक्षा प्रणाली का समर्थन करता है, बल्कि कोलेजन भी बनाता है, जो घावों को भरने में मदद करता है। इसके अलावा, मैंगनीज, जो स्ट्रॉबेरी में पाया जाता है, हड्डियों के स्वास्थ्य का में मदद करता है स्ट्रॉबेरी का सेवन शरीर के चयापचय को बढ़ाने में मदद करता है और सूजन को भी कम करता है।

स्ट्रॉबेरी का औषधीय गुण / स्वास्थ्य लाभ

- स्ट्रॉबेरी लो कैलोरी फल है, जिसका सेवन आप वजन घटाने के लिए भी कर सकते हैं। एक कप स्ट्रॉबेरी में महज 50 कैलोरी होती है। साथ ही फाइबर से भरपूर स्ट्रॉबेरी को खाने के बाद काफी देर तक आपका पेट भरा रहता है
- कैंसर जैसी घातक बीमारी के लिए स्ट्रॉबेरी एक रामबाण इलाज हो सकती है। एक शोध के अनुसार, स्ट्रॉबेरी में कैंसर प्रिवेंटिव और कैंसर थेराप्यूटिक गुण मौजूद होते हैं, जो कैंसर के बचाव और इसके उपचार में प्रभावी असर दिखा सकते हैं। साथ ही स्ट्रॉबेरी में मौजूद केमो प्रिवेंटिव गुण कैंसर सेल के प्रसार को रोकने का काम कर सकते हैं। शोध में यह भी पाया गया कि स्ट्रॉबेरी ब्रेस्ट कैंसर लिए भी लाभकारी सिद्ध हो सकती है
- स्ट्रॉबेरी में एंटीऑक्सीडेंट गुण और पॉलीफेनॉल्स कंपाउंड प्रचुर मात्रा में होते हैं। स्ट्रॉबेरी आपको ह्रदय संबंधी समस्याओं से बचा सकता है और आपके ह्रदय को स्वस्थ बनाए रखने में मदद करता है इसी वजह से ह्रदय स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए सप्ताह में तीन बार स्ट्रॉबेरी खाने की सलाह दी जाती है वहीं, स्ट्रॉबेरी को ह्रदय के लिए सबसे ज्यादा स्वस्थ फल माना गया है और इसे हार्ट हेल्दी फलों की श्रेणी में रखा गया है।
- अगर आप दांतों को नुकसान पहुंचाए बिना सफेद बनाना चाहते हैं, तो आप स्ट्रॉबेरी का इस्तेमाल कर सकते हैं। यह फल दांतों को प्राकृतिक तरीके से सफेद करने का काम कर सकता है विटामिन–सी से भरपूर स्ट्राबेरी आपके दांतों का पीलापन दूर कर ऐसे एंजाइमों को बनने से रोकता है, जो दांतों में बैक्टीरिया पैदा कर प्लाक और दांत टूटने की वजह बनते हैं
- हड्डी को मजबूत बनाए रखने के लिए स्ट्रॉबेरी काफी फायदेमंद साबित हो सकती है। दरअसल, स्ट्रॉबेरी को बेरी के अंतर्गत माना जाता है और बढ़ती उम्र की वजह से कमजोर होती हड्डियों के स्वास्थ्य को बनाए रखने में बेरी को सहायक माना गया है इसके अलावा, स्ट्रॉबेरी में मौजूद मैग्नीशियम हड्डियों को मजबूत बनाता है
- स्ट्रॉबेरी खाने के फायदे आंखों के लिए भी देखे जा सकते हैं। स्ट्रॉबेरी में एक खास एसिड अल्फा हाइड्रॉक्सी पाया जाता है, जो त्वचा को मुलायम बनाने का काम करता है, जिसका सकारात्मक असर सूजी आंखों पर भी दिख सकता है हालांकि, अल्फा हाइड्रॉक्सी एसिड सूजी आंखों के लिए कितना कारगर होगा, इस

पर सटीक वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। फिर भी सूजी आंखों के लिए स्ट्रॉबेरी को इस प्रकार इस्तेमाल कर सकते हैं।

- स्ट्रॉबेरी के फायदे में रक्तचाप को नियंत्रित रखना भी शामिल है। दरअसल, स्ट्रॉबेरी में पोटैशियम प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जो रक्तचाप को नियंत्रित कर स्ट्रोक के जोखिम को कम करने में मदद करता है इसके अलावा, स्ट्रॉबेरी में मौजूद घुलनशील फाइबर खराब कोलेस्ट्रॉल (LDL) को कम करता है जिससे ब्लड प्रेशर नियंत्रित रखने में मदद मिलती है

- स्ट्रॉबेरी के सेवन से आप अपने मस्तिष्क को भी स्वस्थ बनाए रख सकते हैं। एक अध्ययन के मुताबिक, स्ट्रॉबेरी में मौजूद फ्लेवोनोइड्स उम्र के साथ कमजोर होती याददाश्त को रोकने में सहायक हो सकते हैं इसके अलावा, स्ट्रॉबेरी में मौजूद प्राकृतिक एंटीऑक्सीडेंट और एंटीइंफ्लेमेटरी गुण आपके दिमाग को तनाव मुक्त रखते हैं। साथ ही मस्तिष्क से संबंधित रोगों से लड़ने में भी मदद करते हैं

- अगर आप स्वादिष्ट फल खाकर अपनी इम्यूनिटी बढ़ाना चाहते हैं हैं, तो स्ट्रॉबेरी आपकी मदद कर सकता है। इसमें मौजूद विटामिन–सी आपके शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करता है आपको जानकर हैरानी होगी की एक कप स्ट्रॉबेरी में संतरे से भी ज्यादा विटामिन–सी पाया जाता हैं

- गर्भावस्था के दौरान विटामिन व कैल्शियम की अतिरिक्त मात्रा की जरूरत महिलाओं को होती है। खासकर, फोलेट (विटामिन–बी का एक प्रकार) मात्रा लेना बेहद जरूरी होता है, जिससे स्ट्रॉबेरी भरपूर है। फोलेट प्रेग्नेंसी में सहायक माना जाता है। यह बर्थ डिफेक्ट से जैसी समस्या को कम करने का काम कर सकता बर्थ डिफेक्ट में पोषक तत्वों की कमी से बच्चे का विकास न होना, वजन कम होना, कुपोषण और शिशु से संबंधित अन्य परेशानी शामिल हैं प्रसव पूर्व कितना विटामिन आहार में शामिल करना चाहिए, इसको लेकर डॉक्टर की राय जरूर लें।

,

- स्ट्रॉबेरी फल के फायदे में कब्ज से राहत दिलाना भी शामिल है। स्ट्रॉबेरी फाइबर से समृद्ध होता है, इसलिए यह कब्ज के इलाज में मदद कर सकता है। फल में मौजूद फाइबर पाचन संबंधी परेशानी को भी दूर करने में सहायक है।

- स्ट्रॉबेरी आपकी आंखों की रोशनी बनाए रखने में मददगार साबित हो सकती है। इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट गुण मोतियाबिंद और अन्य नेत्र रोगों से आपको बचाने में सहायक साबित हो सकते हैं। एक अध्ययन के मुताबिक, स्ट्रॉबेरी में मौजूद फ्लेवोनोइड कंपाउंड की मात्रा आहार में बढ़ाने से आप मोतियाबिंद को रोकने के साथ ही दृष्टि स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं।

- स्ट्रॉबेरी में पेक्टिन होता है, जो एक प्रकार का घुलनशील फाइबर है। यह शरीर में खराब कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करता है इसलिए, स्ट्रॉबेरी को आहार में शामिल कर आप कोलेस्टॉल से संबंधित हृदय रोगों से भी बच सकते हैं

- स्ट्रॉबेरी में ग्लाइसेमिक इंडेक्स काफी कम होता है, इसलिए यह ब्लड शूगर के लेवल को नियंत्रित रखने में मदद कर सकता है डायबिटीज–2 के मरीजों के लिए भी स्ट्रॉबेरी को फायदेमंद माना गया है। ध्यान रहे कि साबुत स्ट्रॉबेरी का ही सेवन करें, क्योंकि जहां साबुत स्ट्रॉबेरी फायदा दे सकती है, वहीं इसका जूस नुकसान भी पहुंचा सकता है ब्लड शुगर को नियंत्रित करने के लिए आप स्ट्रॉबेरी के पाउडर को भी इस्तेमाल में ला सकते हैं

- आप स्ट्रॉबेरी का सेवन कर गठिया से राहत पा सकते हैं। इसमें मौजूद पॉलीफेनोल (Polyphenols) और पोषक तत्व घुटने में होने वाली सूजन और दर्द दोनों को कम कर सकते हैं (30)। इसके अलावा, विटामिन–सी की कमी से मसूड़े में होने वाली सूजन को कम करने में भी स्ट्रॉबेरी सहायक साबित हो सकता है

- त्वचा के लिए स्ट्रॉबेरी के फायदे अनेक हैं। इसमें कई पॉलीफेनोल्स होते हैं, जो कारगर एंटीऑक्सीडेंट और एंटी इंफ्लेमेटरी की तरह काम करते हैं। इसमें एंथोकायनिन नामक एक महत्वपूर्ण तत्व पाया जाता है। इसी तत्व के वजह से स्ट्रॉबेरी का रंग लाल और चमकदार होता है। यह त्वचा के लिए भी लाभकारी होता है। यह तत्व त्वचा को सूर्य की हानिकारक किरणों से बचाने का काम करता है यही वजह है कि स्ट्रॉबेरी के अर्क का कई कॉस्मेटिक्स में इस्तेमाल किया जाता है।

- स्ट्रॉबेरी फल के फायदे में एंटी एजिंग भी शामिल है। स्ट्रॉबेरी उम्र के साथ घटती चेहरे की चमक और कसावट बनाए रखने में मदद करता है। इसमें मौजूद विटामिन–सी आपके चेहरे की रंगत को निखारता है और त्वचा की नमी को बनाए रखने में मदद करता है स्ट्रॉबेरी फ्री रेडिकल्स की वजह से चेहरे के नुकसान को कम करने का काम करता है स्ट्रॉबेरी को खाने के साथ ही इसका पेस्ट बनाकर आप चेहरे पर लगा सकते हैं।

- बालों के लिए स्ट्रॉबेरी एक वरदान भी साबित हो सकती है। दरअसल, बालों को स्वस्थ बनाए रखने और इन्हें झड़ने से बचाने के लिए अपनी डाइट पर ध्यान देना काफी जरूरी है। आहार में विटामिन–सी की मात्रा कम होने से भी बाल झड़ने और टूटने लगते हैं। ऐसे में स्ट्रॉबेरी के सेवन से आप बालों को झड़ने से रोक सकते हैं बालों को स्वस्थ रखने के लिए आप स्ट्रॉबेरी पेस्ट को जैतून या नारियल के तेल और थोड़े शहद के साथ मिलाकर हेयर मास्क बना सकती हैं। इससे बालों का झड़ना कम होने के साथ ही बालों में नेचुरल चमक आएगी।

❋❋❋

मृदा लवणीकरण को रोकना एवं मृदा उत्पादकता बढ़ाना-भविष्य की चुनौतियाँ और उनका समाधान

मनोज कुमार शर्मा
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा

आज हर वर्ष 5 दिसम्बर को हम अर्न्तराष्ट्रीय मृदा दिवस का आयोजन विश्व स्तर पर करते है। इसके अर्न्तगत विचार विमर्श, वार्तालाप, गोष्टीयों और समुह चर्चा के लिए एक मृदा से समबंधित विषय FAO के द्वारा स्लोगन के रूप में दिया जाता है। इस वर्ष का विषय/स्लोगन है– **मृदा लवणीकरण को रोकना और मृदा उत्पादकता बढ़ाना।** ऐसी मृदाएँ जिनमें विलेय लवणों अथवा विनिमय सोडियम के आधिक्य के कारण पादप वृद्धि नही होती है अथवा पादप वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, लवण प्रभावित मृदाएँ कहलाती है। यह एक विश्व व्यापी चुनौती है, आज अनियंत्रित तथा अत्यधिक मात्रा में सिंचाई जल के प्रयोग तथा असंतुलित उर्वरक व रासायनिक पदार्थो के प्रयोग से मृदा के लवणीकरण में दिन ब दिन बढ़ोत्तरी होती जा रही है। जल के साथ मृदा में उपस्थित लवणों का घुलकर मृदा की सतह पर जमाव कई तरह की समस्याओं का कारक बन रहा है। पौधो के अंकुरण से लेकर पोषक तत्वों की उपलब्धता को भी यह लवण रूकावट पैदा करते है। पादप की वृद्धि में भी इन लवणों का एक तरह का विशैला प्रभाव पढ़ता है। अगर हम मृदा के सन्दर्भ में बात करें तो यह लवण मृदा को बांधकर उसकी भौतिक संरचना को तहस नहस कर देते है–जिसकी वजह से जल, वायु संचरण और पादप के मुलतंत्र का विस्तार मृदा में उचित तरीके से नही हो पाता है। लवण मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों को भी अनुपलब्ध रूप में परिवर्तित कर देते है। यह मिट्टी के कणों को बांधकर मिट्टी के अन्दर निवासरत सुक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता को भी काफी हद तक प्रभावित करते है।

भारत में लवण प्रभावित मृदाओं का विस्तार करीब 71 लाख हैक्टर क्षेत्र में है। ये प्राय शुष्क तथा अर्ध–शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में पायी जाती है। इसका सर्वाधिक क्षेत्रफल देश के उत्तरी राज्यों पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश तथा गुजरात में फैला हुआ है। राजस्थान में ही तकरीबन 8 लाख हैक्टर भूमि लवणों से प्रभावित है। लवणीय तथा क्षारीय मृदाओं के बनने में मुख्य रूप से शुष्क जलवायु, प्रोफाइल में कड़ी परत, जल निकास की कमी, उच्च जल स्तर, बहुत समय तक लवणीय जल से सिंचाई, पैतृक पदार्थो की प्रकृति तथा क्षारीय प्रकृति के उर्वरको का अत्यधिक प्रयोग आदि, कारक सहायक होते है।

लवण प्रभावित मृदायें पादप वृद्धि पर कई प्रकार से हानिकारक प्रभाव डालती है। इस प्रकार की मृदाओं में जो लवण उपस्थित होते है, वे स्वयं तो पौधों के पोषक के रूप में प्रयोग होते नही, परन्तु पौधों की जड़ों और तनों के सम्पर्क में आकर उन्हें हानि जरूर पहुँचाते है। विलेय लवणों का हानिकारक प्रभाव पौधों में जल तथा पोषक तत्वों के उद्ग्रहण में विघ्नता उत्पन्न करता है। लवण प्रभावित मृदाओं की पहचाान की अगर बात करे तो गर्मियों में लवण की सफेद या भूरी राख के रंग की तह इन मृदाओं पर दिखाई पड़ती है, जो वर्षा होने पर या सिंचाई करने पर विलीन हो जाती है। इन मृदाओं में पर्याप्त नमी होते हुए भी पौधें जल की कमी प्रदर्शित करते है तथा पौधें मुरझा जाते है और वृद्धि कम होती है। पोषक तत्वों की अनुपलब्धता के कारण कुछ पौधों में क्लोरोसिस, उत्तक क्षय एवं विचित्र सुखाव के लक्षण भी दिखाई देते है। लवणीय मृदाओं की उत्पादकता बढ़ाने हेतु इन मृदाओं का भौतिक रासायनिक तथा जैविक सुधार कर उचित प्रबन्धन द्वारा भविष्य के लिए इन्हे संरक्षित की जा सकती है। इन मृदाओं में समुचित रूप से लवण प्रतिरोधी फसलों का चुनाव करके लाभप्रद उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इन मृदाओ में जहाँ सुधार का कोई तरीका सफलतापुर्वक अपनाया है, वहाँ पर कुछ समय के लिए लवण सहिष्णु फसलें उगायी जा सकती है। इनको लवण सहिष्णुता के आधार पर 3 वर्गो में बाटां गया है।

इन मृदाओं को खाली/परती नही छोड़ना चाहिए अन्यथा ये अपनी अवस्था में वापिस आ जाती है। लवण प्रभावित मृदाओं में उर्वरकों को उनकी निर्धरित मात्रा से अधिक देकर फसलों पर लवणता का असर कम किया जा सकता है। नाइट्रोजन की अधिकता (लगभग 25%) से फसल अच्छी होती है। अमोनियम सल्फेट का प्रभाव यूरिया तथा किसान खाद से अच्छा होता है। इन मृदाओं में पोटाश तथा फास्फोरस उर्वरको के प्रयोग से सोडियम क्लोराइड का पौधों द्वारा अवशोषण कम हो जाता है। अकार्बनिक उर्वरको के साथ कार्बनिक खाद, हरी खाद जैसे ढैंचा का प्रयोग करना भी लाभ्दायक होता है।

यह समस्या उन क्षेत्रों में ओर बढ़ जाती है जहाँ नहरी सिंचाई तंत्र के द्वारा फसलों को सिंचा जाता है। इन क्षेत्रों में मृदा का जल स्तर ऊपर आ जाता है तथा यह घुलनशील लवणों को अपने साथ घोलकर मृदा सतह के आस–पास एकत्रित हो जाते है जो कि पादप वृद्धि तथा मृदा स्वास्थ्य पर विपरित प्रभाव डालते है।

तालिका1 : लवणों के लिये फसलों की आपेक्षिक सहिश्णुता

फसलें	उच्च लवण सहिष्णु	मध्यम लवण सहिष्णु	न्यून लवण सहिष्णु
शस्य फसले	जौ, ढैंचा, चुकंदर, तम्बाकू, शलजम, सरसों, कपास	राई, गेहुँ, जई, धान, ज्वार बाजरा, मक्का, अरहर	सेम, मूंग, उर्द, चना, मटर, सनई
शाक भाजी वाली फसलें	शलजम, चुकंदर, पालक, मूली	टमाटर, पत्तागोभी, फूलगोभी, सलाद, आलू, गाजर, प्याज, मटर, खीरा, लौकी, करेला	सेम, मूली (विदेशी किस्में)
फलों की फसलें	खजूर, फालसा	अनार, जैतून, अंजीर, अंगूर, अमरुद, आम, केला	नाशपती, सेब, नारंगी, बेर, बादाम, नींबू, स्ट्राबेरी
चारे की फसलें	खार घास, रोड्स घास	सेंजी, सूडानघास, रिजका, ज्वार, कपास, बरसीम	ग्वार

जैविक खेती: किसानों के लिए वरदान

लक्षिता चौहान, मनमीत कौर एवं रेनू जेठी

कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान, कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर एवं भा.कृ.अ.नु.प.–विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोडा, उत्तराखण्ड

भारत देश अपनी विविधता व संस्कृति के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध है, भारत एक विकासशील देश होने के साथ–साथ बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था का जीता–जागता प्रमाण है। भारत की अधिकतर जनसंख्या गांवों में निवास करती है, एवं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। अतः, यह कहना पूर्णतया उचित है, कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की जैव विविधता के कारण ही यहां आदिकाल से खेती की जा रही है, और आज भी कृषि को हमारी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी कहा जाता है। प्राचीन काल में किसान हमारी खाद्य मांग को पूरा करने के लिए बिना कृषि–रसायनों का उपयोग किए विभिन्न फसलें उगा रहे थे, परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत की जनसंख्या में अचानक से उछाल देखने को मिला, अतः इतनी अधिक जनसंख्या व सीमित संसाधनों को देखते हुए सन 1960 में ''हरित क्रांति'' ''डॉ. एम.एस स्वामीनाथन जी'' के द्वारा लाई गई जिसके फलस्वरुप उच्च उत्पादन करने वाली किस्मों व रसायनों के उपयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई, जमींदारी उन्मूलन, भूमि सुधार जैसे कदमों के चलते भारत में समतामूलक समाज के निर्माण को गति मिली। इससे छोटे व मध्यम स्तर के किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और इससे उनमें शिक्षा तथा राजनैतिक चेतना का विकास हुआ। परंतु शनैः शनैः जैसा कि हम सभी को विदित है कि अति किसी भी चीज की हमेशा नुकसानदायक ही होती है और ठीक वैसा ही हुआ। अत्यधिक रसायनों के उपयोग से पहले तो उत्पादन काफी अच्छा हुआ पर धीरे–धीरे जमीन बंजर होने लग गई। मृदा की उत्पादकता में कमी आ गई, वातावरण पर दुष्प्रभाव हुआ तथा मनुष्य के स्वास्थ्य पर भी इन रसायनों का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अत्यधिक रसायनों के मनुष्य के शरीर में जाने से विभिन्न प्रकार के जानलेवा रोगों से मनुष्य ग्रसित होने लगा। जैव विविधता पर इसका दुष्प्रभाव हुआ तथा अत्यधिक रसायनों के उपयोग से खाद्य श्रंखला भी प्रभावित हुई एवं रसायनों के कल–कारखानों से सीधे ही समुंद्र में मिल जाने से समुद्री जीवो को भी नुकसान पहुंचने लगा। अतः, कृषि रसायनों के जानलेवा दुष्प्रभावों को देखने से मनुष्य जागृत हुआ और वह जैविक खेती के महत्व को समझने लगा। जैविक खेती, खेती का पुरातन तरीका ही नहीं बल्कि यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण को देखते हुए मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा को बिना किसी रसायन के उपयोग के बढ़ाते हुए उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करते हुए ''कुशल खेती'' करना है। जैविक खेती वर्तमान समय में अत्यन्त आवश्यक है, यह न केवल अभी के लिए बल्कि भावी पीढ़ी के लिए भी महत्वपूर्ण है।

जैविक खेती का महत्त्व

मृदा, पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को सशक्त बनाए रखने के लिये जैविक खेती नितान्त आवश्यक है। इससे न केवल उच्च गुणवत्तायुक्त, स्वास्थ्यवर्द्धक एवं पौष्टिक खाद्य पदार्थों की उपलब्धता बढ़ेगी, बल्कि खेती में उत्पादन लागत कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही मृदा उर्वरता में सुधार के साथ–साथ किसानों की आमदनी में भी इजाफा होगा। जैविक खेती अपनाने में निश्चित रूप से कुछ समय के लिए उत्पादन घटता है, क्योंकि अचानक से रसायनों का उपयोग उस खेत में बंद कर दिया जाता है। माना कि यह एक किसान के लिए नुकसानदायक हो सकता है, परंतु जैविक खेती से रसायनों के दुष्प्रभाव को दूर किया जा सकता है और अकार्बनिक खेती को कार्बनिकध्जैविक खेती में बदलना लंबे समय के लिए अच्छा है, यह मृदा को उपजाऊ बनाती है, वातावरण को शुद्ध करती है व रसायनों के उपयोग से होने वाली विभिन्न प्रकार की हानियों से भी मनुष्य को बचाती है। वर्तमान स्थिति में प्रायः जैविक खेती में लागत तो अधिक आती ही है साथ ही किसानों को जैविक उत्पादों का उचित मूल्य भी नहीं मिल पाता है। अतः जैविक खेती तभी संभव है, जब इस दिशा में किसानों के हित में जैविक खेती को बढावा देने हेतु हम सभी भारतीय समग्र प्रयास करें। किसानों को उनके जैविक उत्पादों के लिए उचित मूल्य प्राप्त होना चाहिए, हालांकि वह दिखने में अर्थात बाहरी रूप से रासायनिक उत्पादों की तुलना में कम आर्कषित दिखते हैं। परंतु उपभोक्ता को जागरूक रहते हुए बाहरी दिखावे के भ्रम में ना पढ़कर शुद्ध रसायन मुक्त उत्पाद खरीदने चाहिए।

जैविक खेती के उद्देश्य

पर्यावरण को नुकसान पहुंचाए बिना मृदा की उत्पादकता को बढ़ाते हुए खेती करना ही जैविक खेती का प्रमुख उद्देश्य है। इसके अंतर्गत पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना, पारिस्थितिक संतुलन को फिर से स्थापित करना, मृदा की उर्वरता में सुधार, वनस्पतियों और जीवों का संरक्षण, आनुवंशिक विविधता को बढ़ाना एवं रासायनिक प्रदूषण और जहरीले अवशेषों के शमन में भी मदद करता है।

जैविक खेती के क्रियाकलाप

- मृदा के पोषक तत्वों को बढ़ाने के लिए कार्बनिक खाद, केंचुए की खाद, गोबर की खाद, पंचगव्या (दूध, दही, घी, गोमूत्र व गोविष्टा को उचित अनुपात में मिलाने से) को बुवाई से पूर्व खेत में अच्छी तरह से जोत कर डाला जाए।
- खरपतवार निवारण हेतु समय–समय पर निराई गुड़ाई करी जाए, हंसिया के द्वारा हाथों से खरपतवार को नष्ट किया जाए।

- कीटों से बचाव के लिए नीम के तेल का प्रयोग भी किया जा सकता है। रसायनों को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित करके ही जैविक खेती की जा सकती है।

सरकार द्वारा जैविक खेती हेतु किए गए प्रयास

सन 2004–05 में जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय जैविक खेती परियोजना (एन. पी. ओ. एफ.) शुरू करने के उपरांत भारत में जैविक खेती की तरफ ध्यान केंद्रित किया गया। सरकार के प्रयासों से विभिन्न प्रकार की योजनाएं चलाई गई। उनमें से सन् 2015 में केंद्र सरकार द्वारा परंपरागत कृषि विकास योजना (पी. के. वी. वाई.) भी चलाई गई। पी.के.वी.वाई., राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन (एन.एम.एस.ए.) के तहत मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन (एस.एच.एम.) योजना का एक उप–घटक है, जिसका उद्देश्य दीर्घकालिक मिट्टी की उर्वरता निर्माण एवं संसाधन सुनिश्चित करने के लिए पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के मिश्रण के माध्यम से जैविक खेती के स्थायी मॉडल को विकसित करना है। यह संरक्षण, जलवायु परिवर्तन अनुकूलन और शमन में भी मदद करता है। इसका मुख्य उद्देश्य मृदा की उर्वरता को बढ़ाना है और इस तरह कृषि–रसायनों के उपयोग के बिना जैविक प्रथाओं के माध्यम से स्वस्थ भोजन के उत्पादन में मदद करना है। पी.के.वी.वाई. का उद्देश्य न केवल इनपुट उत्पादन, बल्कि गुणवत्ता आश्वासन, नवीन माध्यमों के द्वारा मूल्य संवर्धन एवं प्रत्यक्ष विपणन में क्लस्टर दृष्टिकोण के माध्यम से संस्थागत विकास द्वारा किसानों को सशक्त बनाना है।

जैविक खेती के लाभ

फलों, सब्जियों और अन्य पोषक तत्वों से भरपूर जैविक उत्पादों को उगाने से पर्यावरण, जैव विविधता, किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती हैं। जैविक खेती रोगों और कीटों के बेहतर प्रतिरोध वाले पौधों का उत्पादन करने के लिए महंगे कृषि रसायनों के उपयोग से बचाती है। जैविक रूप से उगाए गए भोजन में अधिक स्थायित्व, सूखा सहनशीलता, कीट और रोगों के लिए उच्च प्रतिरोध क्षमता भी शामिल हैं। जैविक खेती में उपयोग की जाने वाली इंटरक्रॉपिंग, फसल रोटेशन और न्यूनतम जुताई की प्रथाएं मिट्टी की उर्वरता, संरचना और जल धारण क्षमता में सुधार के साथ–साथ पशु और फसल उत्पादन की लागत को भी कम करती हैं। यह काफी ऊर्जा बचाता है, ग्लोबल वार्मिंग को कम करता है और महंगे उर्वरकों, कीटनाशकों और कवकनाशी के उपयोग की लागत को कम करता है। जैविक आधारित कृषि उत्पादन प्रणाली जैव विविधता के संरक्षण, पर्यावरण की रक्षा और पारिस्थितिक संतुलन को बढ़ावा देने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के चक्रण को बढ़ावा देती है।

जैविक खेती की हानियां

पारंपरिक खेती की तुलना में अधिक उत्पादन लागत, भूमि की कम उपलब्धता और कार्यबल की कमी के कारण जैविक उत्पाद अधिक महंगे होते है। सीमित क्षेत्र में जैविक खेती करने के कारण उससे उत्पन्न उत्पाद विश्व की विशाल जनसंख्या की खाद्य मांग को पूरा करने के लिए अक्षम है। आनुवंशिक संशोधन का उपयोग न करना जैविक खेती के दोष हैं, क्योंकि इसके हेतु उपयुक्त और मूल्यवान कौशल की आवश्यकता होती है।

निष्कर्ष

जैविक खेती के निरंतर उपयोग द्वारा रसायनों के दुष्प्रभाव से मनुष्य, पर्यावरण और जैव मंडल को बचाया जा सकता है इससे सीमित संसाधनों के प्रयोग से अच्छा उत्पादन किया जा सकता है। जैविक खेती भविष्य के लिए हमारे किए गए आज के प्रयासों में से एक होनी चाहिए, जिसके लिए शहरी क्षेत्र के लोगों को भी ''किचन गार्डन'' बनाने चाहिए, जिससे वह अपने व अपने परिवार के लिए ताजी व रसायन मुक्त सब्जियां व फल उगा सके। जैविक खेती केवल कुछ किसानों के प्रयास से सफल नहीं हो सकती इसके लिए जमीनी स्तर से सरकार तक प्रयास किए जाने चाहिए। पृथ्वी को बचाने के लिए जैविक खेती हमारे द्वारा लिया गया एक छोटा सा कदम है, जो कि बाद में मील का पत्थर साबित हो सकता है।

❋❋❋

संतरा की फसल ऐसे रहेगी वर्ष भर स्वच्छ व स्वस्थ

राकेश कुमार यादव, एम. सी. जैन, राजेन्द्र कुमार यादव एंव विनोद कुमार यादव
कृषि महाविद्यालय उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि अनुसंधान केन्द्र उम्मेदगंज, कोटा

नीबूं वर्गीय फलों में संतरा उत्पादन की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है। इसका उत्पादन मुख्य रूप से महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, असम आदि में होता है। इसके फलों से रस के साथ–साथ स्क्वैश एवं मार्मलेड भी बनाया जा सकता है। सन्तरा के पौधे छोटे से मध्यम, सीधे, अनियमित वृद्धि एवं अपेक्षाकृत कम काटों वाले होते है। इसके फलों की छाल ढीली होती है जो कलियों से आसानी से अलग हो जाती है। संतरा की खेती की सामान्य जानकारी इस प्रकार है।

जलवायु : संतरा के पौधे को शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। अत्यधिक वर्षा फसल के लिए नुकसानदायक होती है। पौधे खेत में लगाने के तीन से चार वर्ष पश्चात् फल देना शुरु कर देते है। पाला फसल के लिए नुकसानदायक होता है। 10–35 से. तापमान इसके लिए अनुकूल माना जाता है।

भूमि: संतरा के लिए दोमट भूमि जिसकी निचली पर्त में भारी मिट्टी हो तथा पी.एच. मान 6 से अधिक हो अच्छी मानी जाती है।

उन्नत किस्में : नागपुर संतरा, कुर्ग, खासी, किन्नो, क्लीमेन्टाइन, मुदखेड, कारा आदि किस्में है।

पौधे लगाने की विधि : संतरा के पौधे 6 से 8 मीटर की दूरी पर लगाये जाते है। इसके लिये 90 x 90 x 90 सेमी आकार के गड्ढे दो माह पूर्व अर्थात मई, जून के महिने में खोद लेने चाहिये। गड्ढों में 25 किलोग्राम गोबर की खाद तथा एक किलोग्राम सुपरफास्फेट व 50 से 100 ग्राम क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण गड्ढों की मिट्टी में मिलाकर भर देनी चाहिये। पौध लगाने का सबसे उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त रहता है। जहाँ पानी की अच्छी सुविधा हो वहां इनको फरवरी माह में भी पौधे लगाये जा सकते है।

खाद एवं उर्वक : गोबर की खाद, सुपर फॉस्फेट एवं म्यूरेट ऑफ पोटाश की पूरी व यूरिया की आधी मात्रा दिसम्बर जनवरी में तथा यूरिया की शेष आधी मात्रा जून–जुलाई माह में देवें। खाद एवं उर्वरक की सिाफारिश तालिका 1 के अनुसार है।

तुड़ाई एवं उपज : संतरा का रंग जब हल्का पीला हो जावे तब इनकी तुड़ाई करनी चाहिये। संतरा की उपज प्रति पौधा 70 से 80 किलोग्राम होती है।

संतरा बगीचे का प्रबन्धन : सन्तरा के बगीचे में महिने अनुसार वर्षभर किये जाने वाले कार्य इस प्रकार है।

जनवरी

- संतरा के बगीचे में बूँद–बूँद सिंचाई पद्धती से सिंचाई करें, जिसके लिये 7–30, 44–72 तथा 82–102 लीटर पानी प्रति दिन क्रमशः 1–4, 5–7 तथा 8 वर्ष के पुराने पेडों में सिंचाई करें। यदि बूँद–बूँद सिंचाई पद्धती की उपलब्धता नही है, तो दोहरी थांवला पद्धती द्वारा बगीचे की सिंचाई करें।
- पौधों पर अम्बे बहार के दौरान जिब्रेलीक अम्ल का 1.5 ग्राम तथा युरिया 1 किलो प्रति 100 लीटर पानी मे मिलाकर छिड़काव करें।
- साइट्रस सायला कीट का प्रकोप बगीचे में अम्बे बहार के समय देखने में आता है। यह कीट "डाई बैक" तथा "ग्रिनिंग" रोग फेलाने में सक्षम है जिससे पेड़ धीरे धीरे सुखकर मर जाते है। इस कीट के नियंत्रण के लिये एसिफेट 2 ग्राम या इमिडाक्लोरोपिड 0.50 मिली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिडकाव करें। आवश्यकतानुसार दुसरा छिडकाव 10 दिन के अन्तराल से करें।
- फाइटोपथोरा रोग के नियंत्रण के लिए संतरे के तने का ग्रसित भाग जहाँ से गोंद का स्त्राव हो रहा है उस भाग कों तेज धार वाले चाकु से छील लें तत्पश्चात पोटेशियम परमेगनेट द्रव (10 ग्राम 1 लीटर

तालिका 1 संतरा फसल में खाद एवं उर्वरक की सिफारिश मात्रा

खाद / उर्वरक	मात्रा प्रति वृक्ष (कि.ग्रा.)				
	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पंचम वर्ष एवं बाद में
गोबर की खाद	15	30	45	60	75
सुपर फास्फेट	0.25	0.5	0.75	1.0	1.25
म्यूरेट ऑफ पोटाश	-	-	0.2	0.2	0.4
यूरिया	0.125	0.25	0.375	0.5	0.625

पानी) से धोकर तने पर मेफेनोक्जॉम एम जेड 68 (मेटालेक्झील एम. 4 प्रतिशत, मेंकोझेब 64 प्रतिशत) अथवा फोसाटील ए. एल. का मलहम लगायें।

फरवरी

- फरवरी माह में संतरे के पेड़ों पर नई कोपलें, फूल तथा फल लगते हैं। तथा वातावरण में उष्णता बढ़ने के कारण सिंचाई की आवश्यकता होती है अतः दोहरी थांवला विधि द्वारा 7 से 10 दिन के अंतराल में बगीचे की सिंचाई करें।
- तेला के प्रकोप के नियंत्रण हेतु डायमेथोएट 1.5 मि.ली. अथवा क्युनालफॉस 1.5 मि.ली प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। कीट का प्रकोप दुबारा होने पर दूसरा छिड़काव एक हफ्ते के अंतराल से करना चाहिए।
- अम्बे बहार के दौरान साइट्रस सिला नियंत्रण के लिए इमिड़ा 0.5 मि.ली अथवा एबामेक्टीन 0.42 मि.लि अथवा डायमेथोएट 2 मि. ली. एक लीटर पानी में अच्छी तरह मिलाकर पेड़ों पर छिड़काव करें। लिफमाइनर के नियंत्रण हेतु फेनवलरेट 20 ई.सी. एक मि.ली. /लीटर पानी का छिड़काव करें। अगर कीट का प्रकोप अधिक है तो दुसरा छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें परंतु कीटनाशक बदल देना चाहिए।
- पत्ती खानेवाली इल्ली का प्रकोप भी इस माह में रहता है। कीट संतरे की कोमल पत्तियाँ खाता रहता है। इसके नियंत्रण हेतु सायपरमेथ्रीन 10 ई.सी. 2 मि.ली. अथवा डायमेथोएट 1.5 मि.ली. अथवा फेनवलरेट 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

मार्च

- मार्च के माह में गर्मी की बढ़ोतरी के कारण संतरे के पेड़ों को दोहरी थाला विधि से 7 से 10 दिनों के अंतराल में सिंचाई करें।
- फाइटोपथोरा रोग का प्रादुर्भाव है तो जनवरी माह मे दि हुई सिफारिश का पालन करें ।
- खेत से खरपतवार निकालकर उसे पौधों के नीचे तने के चारो तरफ बिछा दें ताकि गर्मी की उष्णता से जमीन से पानी वाष्प बनकर न उड़ सके तथा नमी बनी रहे ताकि फलों का असमय फल गलन न हो।
- इस महीने में तापमान में वृद्धि के कारण बगीचे के पौधों को सूखने से बचाने के लिये 2, 4– डी अथवा जिब्रेलिक अम्ल 1.5 ग्राम तथा एक किलो पोटेशियम नाइट्रेट 100 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- पत्ती खाने वाली इल्ली का प्रकोप भी इस महीने रहता है। इसके प्रकोप से इल्ली संतरे की कोमल पत्तियां कुतर जाती है। इसके नियंत्रण के लिये फेनवलरेट 2 मि.ली अथवा डायमेथोएट 1.5 मि. लि. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

अप्रैल

- सिंचाई का कार्य नियमित तोर से करें ताकि अंबे बहार पेड़ों पर टिकी रहें। क्योंकि इस माह में गर्मी बढ़ने लगती है अतः सिचाई 6–7 दिन के अंतराल पर करें।
- मृग बहार के फल तोडने के पश्चात् नींबुवर्गीय पेड़ों की निर्जीव टहनियां काटकर नष्ट कर दें तथा पेड़ों पर कारबेन्डाजिम 75 डब्ल्यू.पी. एक ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

मई

- इस महीने में बढतें तापमान को ध्यान में रखकर बगीचे में सिंचाई का खास ध्यान रखें।
- अगर इस बारिश में नये संतरे का बगीचा लगाना है तो 6 x 6 मीटर के अंतराल में 75x75x75 से. मी. के गड्डे खोदकर उसकी मिट्टी बाहर निकालकर रखें ताकी गड्डो में अच्छी धुप लग सकें।
- तनों पर दो फूट की उंचाई तक बोर्डोपेस्ट का मलम ब्रश से लगायें।
- जिन पेड़ो से गोंद की तरह चिपचिपा स्त्राव निकल रहा हो उस जगह को तेज धारवाले चाकू से छीलकर साफ कर लें। अब इस पर फोसेटील एल. 80 प्रतिशत डब्ल्यू. पी. का मलम लगायें।
- मिलिबग के नियंत्रण हेतु संतरे के तने के चारो ओर की मिट्टी खोदकर भुरभुरी करें। इसके अतिरिक्त पौधे के तने पर प्लास्टिक का गोल पट्टा लगाए और उस पर चिपचिपे पदार्थ लगाये (ग्रीस आदि)। बगीचे में चीटों की मांद को नष्ट करें। इसके लिये उनके बिल में क्लोरपायरिफॉस 20 ई.सी. 5 मि. ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर घोल बनाकर डालें। मिलीबग के नियंत्रण के लिये क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी./2 मि.ली. अथवा डायक्लारोवास 2. 5 मि.ली. अथवा डायमेथोएट 2 मि.ली. एक लिटर पानी में मिश्रण बनाकर पौधे तथा तने पर छिड़काव करें।

जून

- जिन बगीचों में पेड़ो में पानी रोक रखा है वहां अगर असमय बारिश का पानी पड़ जाये तो क्लोरमाक्वेट क्लोराइड 2 मि.ली. प्रति लिटर पानी में मिलाकर पेड़ों पर छिड़काव करें। दूसरा छिडकाव 15 दिन बाद करें।
- पोटेशियम नाईट्रेट 1.5 किलोग्राम के साथ 1.5 ग्राम 2–4–डी प्रति 100 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। यह फलों का आकार विकसित करने में मदद करेगा।
- वर्षा समय पर न हो तो बगीचे में सिंचाई करके मृग बहार के पौधों पर चल रहे तनाव को कम करें। बारिश में पौधे के चारों और पानी न इकठ्ठा हो इसके लिये वहां की मिट्टी समतल कर दें। प्रत्येक दो संतरे के पौधे की कतारों के बाद वर्षा के पानी की निकासी हेतु 30 से.मी. गहरे व 45 से.मी. तथा 30 से. मी. तल चौड़ाई की नालीयाँ बनाएं। गर्मीयों में पौधे के चारों और भूसा अथवा पॉलिथिन हटा दें।
- इस माह में संतरे के तने पर बोर्डो–पेस्ट लगायें।

जुलाई

- वर्षा ऋतु में संतरे के बगीचे से जल निकास का प्रबंध अच्छा होना चाहिये। बारिश के पानी को सुचारु रुप निकालने के लिये खेत में पानी के ढलान की ओर प्रत्येक दो पौधों की कतारों के बाद 30 से. मी. गहरे, 45 सें. मी. चौड़े तथा 30 से. मी. तल की चौड़ाई की नालियां बनाये। पौधों के चारों ओर भूमि समतल होनी चाहिए, ताकि पानी जमा नहीं हो पाये।
- नये बगीचों में अंतर शष्य में केवल मुंगफली, उडद, मूंग, सोयाबीन ही लें नहीं तो पौधों को नुकसान हो सकता है।
- हरी खाद हेतु बगीचे में 40 किलो प्रति हेक्टर के हिसाब से ढेंचा की बुवाई करें।

अगस्त

- एक वर्ष पुराने पौधें में 108 ग्राम यूरिया अथवा 250 ग्राम अमोनियम सल्फेट और 157 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट व 25 ग्राम जिंक सल्फेट, 25 ग्राम फेरस सल्फेट और 25 ग्राम मेगनीज सल्फेट पौधें की मिट्टी में मिलायें। प्रत्येक वर्ष मात्रा इसी अनुपात में बढाते रहें।
- अगस्त माह में नागपुर संतरा के पेड़ों पर पत्तीयां खाने वाली इल्ली का प्रकोप अधिक रहता है। समय पर नियंत्रण नहीं किया गया तो संपूर्ण पेड़ पत्ती रहित हो जाता है। इस इल्ली के नियंत्रण के लिये डायमेथोएट 1.5 मि.ली. अथवा फेनवलरेट 2 मि.ली. अथवा साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. एक मिलि. लिटर पानी में मिलाकर छिडकाव करें।

सितंबर

- अगर खेत में बारिश का पानी इक्ठ्ठा है तो बगीचे के ढलान की ओर नाली बनाकर अतिरिक्त पानी को बाहर निकाल दें।
- बारिश की समाप्ति पर पौधों के चारों और दोहरी रिंग की आकृति में मेड बनाये ताकि सिंचाई की व्यवस्था की जा सके। इस कार्य से संतरे के पेड़ की सुक्ष्म जड़ो को हवा भी मिलती है।
- माईट के नियंत्रण के लिये सितंबर के अन्तिम सप्ताह मे 2 मि. ली. डायकोफॉल अथवा 3 ग्राम गंधक प्रति लीटर पानी मे मिलाकर छिडकाव करें।
- फल मक्खी के नियंत्रण के लिए मिथाईल युजिनॉल 0.1 प्रतिशत में 0.05 प्रतिशत मेलाथिआन संकरे गले की शिशी में भरकर पेड पर लटकाए। प्रत्येक 7 दिनों में पानी बदलें। एक हेक्टर के लिए 25 फेरोमेनट्रेप लगाए।

अक्टुबर

- बगीचे में सिंचाई की व्यवस्था करें। नीबूवर्गीय पौधों को "डबल रिंग" पध्दति से सिंचाई करें।
- फल का रस चुसने वाले पतंगो से बचाव के लिये जहर युक्त तरल पदार्थ तैयार करें। इसके लिये प्लास्टिक टब में दो लीटर पानी में 50 मि.ली. डायजिनॉन अथवा 20 मि.ली. मेलाथिऑन के साथ 200 ग्राम गुड़ अथवा संतरे का रस मिलायें। इसके ऊपर 60 वॉट का बल्ब जलायें।
- कीट ग्रसित गिरे हुए पके संतरो को गड्डे में दाबकर नष्ट कर दें।
- फल मक्खी के प्रकोप से बचने के लिये मिथाइल युजेनॉल के साथ 2 मि.ली मेलाथिऑन को एक लिटर पानी में मिलाये तथा इस मिश्रण को लंबी गरदनवाली शिशी में भरकर पौधों पर लटकाये। प्रत्येक 7 दिन बाद इस मिश्रण को बदलते रहें।
- माईट्स के नियंत्रण के लिये डायकोफॉल 1.5 मि.ली. अथवा गंधक द्रव 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिडकाव करें। 15 दिन के अंतराल पर दूसरा छिडकाव करें।
- बगीचे से खरपतवार नष्ट करें तथा खेत की अच्छी तरह से जुताई करें।
- अंबे बहार की फसल को तोडना शुरु करें।

नवम्बर

- बगीचे की सिचाई करें।
- संतरे के बगीचे से खरपतवार नष्ट करें तथा बगीचे में साफ सफाई रखें।
- जनवरी–फरवरी में अंबे बहार की फसल लेने हेतु अभी से ऐसे पेड़ों की सिचाई बंद करें।
- अंबे बहार के फलों की तुड़ाई पश्चात निर्जीव टहनियां काटकर नष्ट कर दें तथा पेड़ों पर कार्बेन्ड़ाजिम 75 डब्ल्यू.पी. एक ग्राम प्रति लिटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- इस माह में संतरे के तने पर बोर्डोपेस्ट लगायें।
- संतरे के तने के चारों तरफ कि मिट्टी अगर जमा हो गयी है तो उसे तोड़ कर ढ़िला कर दे ताकि पेड़ो कि जड़ों को हवा मिल सकें।

दिसंबर

- मृग बहार के संतरे अगर पेड़ों पर लगे है तो बगीचे में उनकी सिंचाई करें।

नीबूवर्गीय फलों के पेड़ों में इस महीने माईट्स का प्रकोप बढ़ रहा है। माईट्स से मृग बहार के फल पर एक तरफ से लाल रंग के धब्बे दिखाई देते है। माईट्स के नियंत्रण के लिये ड़ायकोफॉल 2 मि.ली. गंधक द्रव 3 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। 15 दिन के अंतराल पर दूसरा छिड़काव करें।